भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

1939 में स्थापित भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ का उद्देश्य व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में, शिक्षा के माध्यम से अभिवृद्धि करना है, जिसे यह निरन्तर एवं आजीवन प्रक्रिया के रूप में देखता है। संघ प्रौढ़ शिक्षा को एक प्रक्रिया, कार्यक्रम और आन्दोलन के रूप में गतिशील बनाने की दिशा में प्रतिबद्ध है।

संघ प्रौढ़ शिक्षा के प्रसार में कार्यरत स्वंयसेवी संगठनों, विश्वविद्यालयों, शासकीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्यकलापों से समन्वय करता है। संगोष्ठियों एवं सम्मेलनों का आयोजन और प्रौढ़ शिक्षा के विभिन्न आयामों पर निरंतर सर्वेक्षण तथा शोध के साथ, संघ अपने सदस्यों की प्रौढ़ शिक्षा विषयक जानकारी में नवीनता एवं प्रखरता बनाए रखने के लिए समूचे विश्व में अद्यतन विचार और अनुभव प्रस्तुत करने का निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्रों में अनुसंधान हेतु विभिन्न प्रयोगात्मक परियोजनाएं भी संचालित करता है। अपनी नीतियों के अनुसरण में संघ ने 'नेहरू साक्षरता पुरस्कार' एवं महिलाओं में निरक्षरता निवारण कार्य हेतु 'टैगोर साक्षरता पुरस्कार' की स्थापना की है। डा. जाकिर हुसैन स्मृति व्याख्यान प्रतिवर्ष किसी मूर्धन्य शिक्षाविद् द्वारा दिया जाता है। संघ हिन्दी एवं अंग्रेजी शोध कार्य के लिए डा. मोहन सिंह मेहता फेलोशिप भी प्रदान करता है।

संघ का अमरनाथ झा पुस्तकालय प्रौढ़, सतत् और जनसंख्या शिक्षा की सन्दर्भ सामग्री की दृष्टि से देश में अद्वितीय है। विविध सन्दर्भ पुस्तकों के संकलन के अतिरिक्त देश और विदेश से प्रकाशित प्रौढ़ शिक्षा संबंधी पत्र–पत्रिकाएं, सूचना एवं संदर्भ सामग्री भी इसमें उपलब्ध है। संघ, नेशनल इन्फार्मेटिक सेण्टर इंडिया इण्टरनेशनल सेंटर द्वारा प्रायोजित डेलनेट से भी सम्बद्ध है। संघ द्वारा अभी हाल में प्रौढ़ एवं जीवनपर्यन्त अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान (इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडल्ट एंड लाईफलॉंग एजूकेशन) की स्थापना भी कर दी गई है।

संघ प्रौढ़ शिक्षा विषय पर अनेक पुस्तकें व पत्रिकाएं प्रकाशित करता हैं, जो कि मुख्यतः प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों और नवसाक्षरों के लिए है। संघ 'इण्टरनेशनल फेडरेशन आफ वर्कर्स एजूकेशनल एसोसिएशन्स' एवं 'एशियन साउथ पेसेफिक ब्यूरो आफ एडल्ट एजूकेशन' एवं 'इण्टरनेशनल कौंसिल आफ एडल्ट एजूकेशन' से भी सम्बद्ध है। संघ की सदस्यता उन सभी व्यक्तियों एवं संस्थाओं के लिए खुली है जो इसके आदर्शों एवं लक्ष्यों में विश्वास रखते हैं।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

17–बी इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, महात्मा गांधी मार्ग, नई दिल्ली–110002
दूरभाषः 011–23379282, 23378436, 23379306
फैक्सः 011–23378206, ई–मेलः proudhshiksha@gmail.com
directoriaea@gmail.com
website: www.iaea-india.org; www.iiale.org

प्रौढ़ शिक्षा

अप्रैल 2010
वर्ष 53 अंक–9

सम्पादक मण्डल

संरक्षक
प्रो. भवानी शंकर गर्ग

अध्यक्ष
कैलाश चौधरी

इन्दिरा पुरोहित
ए.एच.खान
प्रफुल्ल नागर
के.आर. सुशीले गौडा
डा. विद्याविन्दु सिंह
डा. मदन सिंह

सहायक सम्पादक
बी. संजय

टंकण एवं रूपसज्जा
कृष्ण सिंह

इस अंक में

सम्पादकीय 2

प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों हेतु भारत में प्रशिक्षण – भाग 2
– वी. मोहनकुमार 3

शिक्षा व घरेलू हिंसा
– प्रमिला जोशी 10

भारत में किशोर शिक्षा की आवश्यकता
– हंसराज पाल, जितेन्द्र कुमार पाटीदार 14

उत्तराखण्ड राज्य में शैक्षिक उन्नयन एवं महिला सशक्तीकरण
– संगीता पवार 22

उत्तराखण्ड की महिलाएं एवं साक्षरता
– शिव कुमार शर्मा 26

साक्षरता का रंग
– रामशंकर चंचल 31

छोटे छोटे कदम और टुकड़ा टुकड़ा बातें
– विमला लाल 32

हत्यारिन नहीं हूं मैं
– सरोज 36

The Right to Education now a Fundamental Right
– Ashok Handoo 38

मूल्यः 100 रूपये वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं जिनसे संघ एवं सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं है ।

सम्पादकीय

दर्द दंतेवाड़ा का

जीवन में ऐसा विरले ही होता है जब सुख और दुःख, सफलता और असफलता अथवा उत्साह एवं अवसाद के चरम का अहसास लगभग साथ–साथ ही हो जाय। अप्रैल 2010 के माह में कुछ ऐसा ही हो गया। माह का पहला दिन सफलता और चरम उत्साह का सुख दे गया तो छठवां दिन घोर अवसाद, विफलता, विषाद का दुःख दे गया। अप्रैल 1 को लगभग एक सदी से चले आ रहे आन्दोलन ने सफलता के पैमाने को छूआ और भारतीय संविधान के 86वें संशोधन विधेयक के रूप में 6 से 14 आयु वर्ग के बच्चों हेतु मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकार में शामिल कर लिया गया। समूचे देश के लिए यह एक ऐतिहासिक क्षण था। प्रगति के इस पहल के साथ देश विश्व के उन चंद गिने–चुने राष्ट्रों में शामिल हो गया जहां शिक्षा का अधिकार बच्चों का मौलिक अधिकार है। लेकिन 6 अप्रैल को देश ने घोर अवसाद तथा विफलता का मुख देखा जब सीमा पर किसी युद्ध में नहीं बल्कि मध्य भारत में अपने ही देश के एक गिरोह के लोगों ने अपनी ही सेना के 76 जवानों को दंतेवाड़ा में मौत के घाट उतार दिया।

दंतेवाड़ा से भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ का एक ताजा और सघन रिश्ता है। गत 24 नवंबर, 2009 को संस्थान की एक टीम ने प्रशासन के अुनरोध पर वहां चल रहे उत्तर साक्षरता कार्यक्रम के मूल्यांकन हेतु जिले का दौरा किया था। कई दिनों तक उस जिले में लगातार कार्य करती रही टीम के सदस्यों ने जिले के सभी स्तर के लोगों के साथ गहरी संवाद किया। स्वाभाविक है कि 7 अप्रैल को उपरोक्त घटना की जानकारी ने सभी को स्तब्ध कर दिया।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ, शिक्षा एवं जन चेतना के माध्यम से राष्ट्रीय विकास हेतु कार्य करने वाला समर्पित राष्ट्रीय संस्थान है। गांधी जी की प्रेरणा से स्वाधीनता पूर्व स्थापित यह संस्थान आम जनता के अनिवार्य विकास में व्यवधान को किसी भी समस्या की जड़ मानता है एवं समस्याओं के समाधान हेतु अनिवार्य आवश्यकताओं की पृष्ठभूमि में ही आगे की ओर देखता है या देखने की कोशिश करता है। संस्थान साक्षरता एवं जन–सशक्तीकरण को ही सामाजिक विकारों का प्रभावी इलाज मानता है।

गौरतलब है कि दंतेवाड़ा साक्षरता की दृष्टि से लगभग राष्ट्रीय औसत (64.84 प्रतिशत) के समकक्ष छत्तीसगढ़ (64. 66 प्रतिशत) राज्य का सबसे पिछड़ा जिला है। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार यहां की साक्षरता दर मात्र 30.17 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 20.75 प्रतिशत थी। जिले को इस स्थिति से उबारने के लिए सन् 2002 में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने दंतेवाड़ा में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान लागू करने की स्वीकृति प्रदान की। अभियान पर्याप्त सफल रहा और 8 सिंतबर 2007 को अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस के अवसर पर उत्कृष्ट साक्षरता प्रयासों के लिए इसी दंतेवाड़ा जिले को सत्येन मित्रा स्मृति साक्षरता पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

अब देश के 365 जिलों में केन्द्र सरकार प्रायोजित 'साक्षर भारत कार्यक्रम' लागू होने की घोषणा हो गयी है। दंतेवाड़ा जिला भी इन 365 जिलों में से एक है। यह सच है कि जब इतने बढ़े पैमाने पर अपने लोगों की जान बेवजह चली जाती है तो राष्ट्रीय विषाद उत्पन्न होता है। आरोप–प्रत्यारोप किये जाते हैं। पर वाद–विवादों में यह समय चूकने का नहीं हो सकता। वरन् आवश्यकता इस बात की है कि सभी राष्ट्रीय ताकतें और अधिक तत्परता से विकास के कार्यों में जुट जाएं ताकि स्थानीय लोग विस्थापित न हों और शिक्षित तथा स्वावलम्बी हो राष्ट्र के मुख्य धारा को और दृढ़ बनाएं। शिक्षित व स्वावलम्बी स्थानीय समाज किसी भी चुनौती का मुकाबला सहजता के साथ कर सकता है। और ऐसे समाज की स्थापना प्रौढ़ शिक्षा के समक्ष चुनौती है।

– बी. संजय

प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों हेतु भारत में प्रशिक्षण – भाग 2

– वी. मोहनकुमार

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन

आठवीं आम सभा चुनावों के बाद नई सरकार अस्तित्व में आई जिसने सिलसिलेवार ढंग से कई नवीन नीतियों की घोषणा की। नई आर्थिक नीति, नई उद्योग नीति तथा नई वस्त्र उद्योग नीति आदि के बाद सन् 1986 में एक लम्बे विचार–विमर्श तथा देश के मौजूदा शैक्षिक व्यवस्था के गहन मूल्यांकन के उपरांत नवीन सरकार ने नई शिक्षा नीति की भी घोषणा की। इस नई शिक्षा नीति के अनुरूप इसी वर्ष शिक्षा हेतु एक नई कार्यनीति (Programme of Action, 1986) की भी घोषणा की गई। इस कार्यनीति ने प्रौढ़ शिक्षा हेतु एक नए राष्ट्रीय कार्यक्रम (National Programme of Adult Education, NPAE) को जन्म दिया जो एक समयबद्ध कार्यक्रम था। इसके प्रथम चरण में सन् 1990 तक चार करोड़ तथा दूसरे चरण अर्थात सन् 1995 तक अन्य छह करोड़ असाक्षर प्रौढ़ों को साक्षर बनाने का लक्ष्य रखा गया था।

प्रारंभ में एनपीएई वस्तुतः पूर्व से चली आ रही योजनाओं क्रमशः ग्रामीण कार्यात्मक साक्षरता परियोजना (Rural Functional Literacy Project, RFLP), राज्य प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम (State Adult Education Programme, SAEP) तथा स्वयंसेवी संस्थानों के अनुदान का कार्यक्रम (Programme of Assistance to Voluntary Agencies) आदि का ही उत्तरोत्तर क्रियान्वयन था। आगे चलकर इन सबके साथ कार्यात्मक साक्षरता का जन अभियान (Mass Programme of Functional Literacy, MPFL) भी जुड़ गया। जिसके तहत छात्र, शैक्षिक संस्थान, मजदूर संगठन, स्थानीय निकाय तथा अन्य व्यक्तिक संगठनों से अपेक्षा की गई थी कि वे "प्रत्येक साक्षर एक निरक्षर को पढ़ाएगा" के आधार पर स्वयंसेवी प्रयास के रूप में साक्षरता के विकास में अपना योगदान देंगे तथा सरकार इनके द्वारा क्षेत्र में की गई वास्तविक खर्च का भुगतान करेगी।

यहां सबसे महत्वपूर्ण यह था कि एनपीएई दस्तावेज ने निरक्षरता के उन्मूलन हेतु एक तकनीकी मिशन के विचार को आगे बढ़ाया। इसने कहा कि निरक्षरता उन्मूलन के कार्यक्रम की शुरूआत ठीक उसी प्रकार होनी चाहिए जिस प्रकार किसी तकनीकी अथवा सामाजिक मिशन की शुरूआत होती है। इस प्रकार के मिशन में यह मान लिया जाता है कि समाज किसी व्यापक वैज्ञानिक, तकनीकी अथवा शैक्षिक परिवर्तन के चौखट पर खड़ा है जहां न केवल संचार एवं संवाद माध्यम का विस्तार किया जाएगा बल्कि इसके साथ साक्षर होने की प्रक्रिया को भी तीव्र और सहज बनाया जाएगा।

इन प्रतिबद्धताओं को आग बढ़ाते हुए 5 मई, 1988 को राष्ट्रीय साक्षरता मिशन – एनएलएम की शुरूआत की गई। वस्तुतः राष्ट्रीय साक्षरता मिशन नई शिक्षा नीति (एनपीई – 1986) तथा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल रिसर्च एण्ड मैनेजमेंट द्वारा एनपीएई के क्षमताओं एवं कमियों के मूल्यांकन के परिणाम

के रूप में अस्तित्व में आया था।

सच्चाई तो यह है कि ऐसे कई कारण विद्यमान हैं जो देश में साक्षरता की मौजूदा स्थिति के प्रति चिंता उत्पन्न करते हैं। यद्यपि स्वाधीनता के उपरान्त औपचारिक शिक्षा के विस्तार में ऐतिहासिक वृद्धि हुई है बावजूद इसके पांच वर्ष एवं उससे ऊपर के असाक्षरों की निरपेक्ष संख्या हर जनगणना में लगातार बढ़ती ही जा रही है। सन् 1961 में यह संख्या 26.7 करोड़ थी जो सन् 1981 में बढ़कर 34.1 करोड़ हो गयी। चूंकि 80 के दशक के मध्य में ही यह स्पष्ट हो गया था कि प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों ने साक्षरों की संख्या बढ़ाने में कोई महत्वपूर्ण भूमिका अदा नहीं की है इसलिए इस हेतु एक व्यापक एवं सुनियोजित हस्तक्षेप की आवश्यकता थी।

संख्यात्मक दृष्टि से राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का स्पष्ट लक्ष्य 15–35 आयुवर्ग वाले 8 करोड़ असाक्षरों को दो चरणों में कार्यात्मक साक्षरता प्रदान करना था। प्रथम चरण सन् 1990 तक की अवधि का था जिसमें 3 करोड़ एवं शेष 5 करोड़ असाक्षरों को दूसरे चरण अर्थात सन् 1995 तक साक्षर बनाना था। साक्षरता का यह मुहिम प्रेरणा आधारित था जिसके आधार पर इस सम्पूर्ण मिशन की रचना होनी थी। इस मुहिम का मिशन दस्तावेज भी साक्षरता हेतु होने वाले प्रयासों में जन सहभागिता सुनिश्चित करने, स्वयंसेवी संस्थाओं को जोड़ने, पूर्व से चले आ रहे कार्यक्रमों जैसे आर.एफ.एल.पी तथा एस.ए.ई.पी. को और विकसित करने, कार्यात्मक साक्षरता हेतु जन अभियान को और विस्तृत करने, उत्तर साक्षरता तथा सतत शिक्षा को संस्थात्मक स्वरूप प्रदान करने की वकालत करता है। यह दस्तावेज इस मुहिम हेतु स्तरीय प्रशिक्षण सामग्री उपलब्ध कराने की भी बात करता है। मिशन अपने द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले कार्यपद्धति की प्रासंगिकता एवं दक्षता प्रमाणित करने हेतु 40 जिलों (20 सम्पन्न तथा 20 सामान्य) पर तकनीकी प्रयोग कर अपनाये जाने वाले पद्धति की क्षमताओं को पूर्व में ही प्रदर्शित करने की भी बात करता है।

एन.ए.ई.पी., ए.ई.पी. तथा एन.पी.ए.ई. की भांति राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने भी अपने प्रबंधन में परियोजना को विशेष महत्व प्रदान किया। भौगोलिक रूप में परियोजना का लक्ष्य जिले के एक या दो लगातार ब्लाकों में साक्षरता कार्यक्रम संचालित करने के रूप में परिभाषित किया गया जिसका व्यापक उद्देश्य सम्बद्ध सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्र (जिले) में असाक्षरता का उन्मूलन करना तथा सतत शिक्षा कार्यक्रमों का आयोजन करना था।

बावजूद इसके की राष्ट्रीय साक्षरता मिशन द्वारा स्वीकृत परियोजना के प्रारंभिक अवधारणा में सुगठित, प्रबंधकीय दृष्टि से व्यवहारिक, बोर्ड में अन्तर्निहित कार्यात्मक स्वायत्ता, वित्तीय मामलों में लचीलापन तथा अन्य मानदण्डों को वरीयता प्रदान करने की क्षमता थी, इसने परियोजना को राज्य सरकारों, स्वयंसेवी संस्थाओं, पंचायती राज संस्थानों, नेहरू युवा केन्द्रों आदि के माध्यम से ही क्रियान्वित करने का निर्णय लिया।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के प्रबंधन के लिए राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय साक्षरता मिशन प्राधिकरण के रूप में केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग के तहत एक स्वायत्त निकाय की कल्पना की गयी। तमाम वित्तीय एवं प्रबंधकीय क्षमताओं से युक्त एन.एल.एम.ए. की संरचना द्वि–स्तरीय थी। प्रथम स्तर पर परिषद् थी जिसका नेतृत्व केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री करते थे जिसमें मंत्रियों सहित प्रमुख

राजनैतिक दलों के नेता, संसद सदस्य तथा शिक्षाविद् आते थे और दूसरी कार्यकारिणी समिति थी जिसका नेतृत्व केन्द्रीय शिक्षा सचिव करते थे। एन.एल.एम.ए. की कार्यकारिणी समिति की बैठकें नियमित रूप से आयोजित होती थी। वस्तुतः कार्यकारिणी समिति ही एन.एल.एम.ए. परिषद् द्वारा निरूपित मानदण्डों के आधार पर इस मिशन को कार्यकारी नेतृत्व प्रदान करती थी।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के शुभारंभ से असाक्षरता उन्मूलन के प्रति केन्द्र सरकार की प्रतिबद्धता एवं तत्परता तो स्पष्ट हो गयी पर एन.एल.एम. ने जहां एक ओर अपने पूर्ववर्ती कार्यक्रमों के खामियों को स्वीकार करते हुए नई भूमि तलाश करने की बात कही वहीं दूसरी ओर अपने मौलिक अवधारणाओं में केन्द्र आधारित पहल को प्राथमिकता प्रदान की जो एन.एल.एम के पूर्व की सारी योजनाओं का भी आधार था। इसने परियोजनाओं को जन आंदोलन के रूप में देखने के बजाय विविध प्रकार के अन्य संस्थाओं द्वारा क्रियान्वियत किये जाने की भी वकालत की। स्वयंसेवी प्रयासों के सवाल पर मौन एन.एल.एम ने प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के प्रेरकों को मानधन न दिये जाने की बात को स्पष्ट रूप से कभी नहीं कहा। सच तो यह है कि अपने प्रारंभिक दस्तावेजों में उन्नत वैज्ञानिक एवं तकनीकी तरीकों, बेहतर पर्यवेक्षण, उपयुक्त प्रशिक्षण आदि के माध्यम से अपने पूर्ववर्ती कार्यक्रमों को बेहतर ढंग से संचालित करने की बात करते हुए एन.एल. एम सामाजिक उत्थान जैसे स्वयंसेवी प्रयास अथवा जन–आंदोलन के बजाय तकनीकी उत्थान की बात करता है। इसमें तकनीकी प्रदर्शन को प्रमुखता दी गयी है जो मुख्यतः तकनीकी प्रशिक्षण से सम्बद्ध है।

ऐसे में यह अंदेशा होता है कि यदि राष्ट्रीय साक्षरता मिशन अपने प्रारंभिक अवधारणाओं में सिमट कर रह जाता तो क्या इसका हश्र इसके पूर्ववर्ती कार्यक्रमों जैसा ही नहीं होता? लेकिन इसके शुभारंभ के चंद महीनों बाद ही दो ऐसे परिवर्तन हुए जिन्होंने न केवल राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के चरित्र एवं भविष्य मार्ग को बदलकर रख दिया बल्कि देश में व्याप्त साक्षरता परिदृश्य एवं इसके प्रति मौजूदा दृष्टिकोण में भी आमूल–चूल परिवर्तन ला दिया। ये नाटकीय परिवर्तन दो अलग–अलग प्रयासों से आये। प्रथम केरला शास्त्रा साहित्य परिषद् द्वारा प्रस्तावित एवं क्रियान्वित एरनाकुलम सम्पूर्ण साक्षरता अभियान जो भारत में बढ़ रहे 'जन विज्ञान आंदोलन' का सर्वाधिक अनुभवी प्रयोग था तथा दूसरा भारत ज्ञान विज्ञान समिति द्वारा क्रियान्वित 'अक्षरा केरलम'। इन दोनों प्रयासों ने केरल को देश का प्रथम पूर्ण साक्षर प्रदेश बना दिया। इस प्रयोग के कारण सम्पूर्ण 'साक्षरता अभियान मॉडल' अथवा 'जन साक्षरता अभियान मॉडल' की जमीनी व्यवहारिकता प्रमाणित हो गयी।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन 5 मई, 1988 को प्रधानमंत्री द्वारा एक सामाजिक अभियान के रूप में प्रारम्भ किया गया जिसका उद्देश्य पूर्ववर्ती कार्यक्रमों की कमियों को रेखांकित करते हुए इस मिशन के लक्ष्यों को साकार करने के लिए हर स्तर पर मौजूद राजनैतिक इच्छाशक्ति का उपयोग करना था। यहां यह गौर करने वाली बात है कि आरंभिक दौर में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का लक्ष्य विशुद्ध रूप से एक संख्यात्मक लक्ष्य था जिसके तहत 15–35 आयुवर्ग वाले असाक्षरों को कार्यात्मक साक्षरता प्रदान किया जाना था पर इस लक्ष्य को समय–समय पर व्यापक संदर्भों में पुर्नगठित किया गया और आगे चलकर इसका उद्देश्य 75 प्रतिशत असाक्षर आबादी को सन् 2007 तक स्थाई साक्षरता के चौखट तक पंहुचाना हो गया।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने अभियानात्मक स्वरूप को अपनाया जिसकी सफलता मूल रूप से सामाजिक शक्तियों के लामबंदी तथा जनसहभाग पर आधारित थी। इस दिशा में पहली सफलता केरल के कोटायम शहर से मिली और दूसरी सफलता एरनाकुलम जिले से प्राप्त हुई जहां साक्षरता अभियान सन् 1989 में आरम्भ किया गया था और एक साल की अवधि में इसे सफलतापूर्वक सम्पन्न भी कर लिया गया।

पहली बार यहां क्षेत्र आधारित समयबद्ध अभियान का प्रयोग किया गया जहां अपने विकास कार्यक्रमों को संचालित करने का दायित्व स्वयं समुदाय पर ही था। इस प्रकार समुदाय के लोग वस्तुतः अपने भविष्य संबंधी निर्णय स्वयं ले रहे थे।

एरनाकुलम जिले में साक्षरता अभियान की सफलता ने वस्तुतः अभियानात्मक स्वरूप की आधारशिला रखी। आगे मिशन के रूप में अपनी राष्ट्रीय रणनीति तैयार करते हुए राष्ट्रीय साक्षरता मिशन अभियान के स्वरूपों में विविधता लाने तथा देश के अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग किस्म की क्षेत्रीय विभिन्नता को समाहित करने के प्रति पर्याप्त सजग रहा। यह इस बात के प्रति भी सजग था कि देश के कई हिस्सों में महिलाओं की भागीदारी के लिए गहन वातावरण निर्माण करने की आवश्यकता होगी।

अच्छे कार्य करने वाले गैर–सरकारी संगठनों के अभाव को भी मिशन ने संजीदगी से लिया और जिला साक्षरता समितियों के गठन में सरकारी तथा गैर–सरकारी संस्थाओं की बेहतर भागीदारी हो सके इस हेतु व्यवस्थित संरचना तैयार की। परिणामस्वरूप यह प्रयास सरकारी संस्थाओं के साथ गैर–सरकारी संस्थाओं के तालमेल और साथ–साथ कार्य करने का प्रथम उदाहरण बन गया। इन प्रयासों में जिला कलेक्टर की भागीदारी ने एक ओर मिशन को प्रबंधकीय नेतृत्व प्रदान किया तो दूसरी ओर सम्बद्ध सभी कार्यकर्ताओं को मिशन में सहभागी होने का अहसास भी कराया।

सम्पूर्ण साक्षरता अभियान

भारत में प्रौढ़ असाक्षरता के उन्मूलन की रणनीति में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के मॉडल को प्रमुखता के साथ स्वीकार किया गया। टी.एल.सी विशेष क्षेत्र केन्द्रित, स्वयंसेवी प्रयास आधारित, किफायती, प्रभावोत्पादक तथा समयबद्ध अभियान था। इस अभियान का मुख्य ध्यान साक्षरता एवं हिसाब–किताब हेतु तय किये गये पैमानों के आधार पर कार्यात्मक साक्षरता के लक्ष्य को हासिल करना था। पूरे अभियान का केन्द्र बिन्दु शिक्षार्थी होता था एवं शिक्षार्थी के सफलता का मूल्यांकन निरंतर, अनौपचारिक तथा सहभागात्मक तरीके से किया जाता था जिसमें कोई अतिरिक्त दबाव नहीं था।

सम्पूर्ण साक्षरता अभियान का वास्तविक लक्ष्य तो कार्यात्मक साक्षरता प्रदान करना था लेकिन इस अभियान ने इसके अतिरिक्त भी शिक्षार्थियों में समाज एवं विकास संबंधी तमाम संदेशों जैसे बच्चों का विद्यालय में नामांकन, दैनिक उपस्थिति, टीकाकरण, छोटे परिवार बनाने के नियमों का प्रसार, शिशु एवं माता की देखरेख, महिला समानता, सशक्तीकरण, शान्ति तथा सामाजिक सौहार्द्र आदि का प्रसार–प्रचार भी किया।

इन साक्षरता अभियानों के कई लुभावने पक्ष थे जैसे इनका विशेष क्षेत्र आधारित होना, किफायती, प्रभावोत्पादक तथा समयबद्ध होना। ये अभियान स्वयंसेवी प्रयासों द्वारा जिले को एक ईकाई मानते हुए वहां के 15–35 आयुवर्ग वाले सभी समुदायों के निरक्षरों हेतु संचालित किये गये। यही कारण था कि साक्षरता अभियानों को राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के मुख्य रणनीति के रूप में स्वीकार कर लिया गया।

सम्पूर्ण साक्षरता अभियान की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित थीं–

1. यह जिला केन्द्रित था।
2. कार्यक्रम का क्रियान्वयन जिला साक्षरता समिति नामक पंजीकृत सोसाइटी द्वारा किया जाता था जिसका नेतृत्व जिला कलेक्टर करते थे।
3. यह एक अभियान के रूप में संचालित किया जाता था जिसमें एकत्रिकरण के माध्यम से समाज के सभी समुदायों की भागीदारी सुनिश्चित की जाती थी।
4. स्वयंसेवी प्रयास इसका मुख्य आधार था।
5. वातावरण निर्माण भी अभियान का अंग था जिसमें पारंपरिक लोक संस्कृति, लोक कलाओं तथा दूरदर्शन एवं रेडियो जैसे जन–माध्यमों का भरपूर उपयोग किया जाता था।
6. सम्पूर्ण अभियान की अवधि 12 से 18 महीनों की होती थी जिसके अंतर्गत घर–वार सर्वेक्षण, वातावरण निर्माण, नामांकन, निर्देशन, निगरानी तथा मूल्यांकन शामिल था। शिक्षण/प्रशिक्षण के लिए 6 माह के अंतगर्त 200 घण्टे निर्धारित थे।

स्वयंसेवकों को कुल मिलाकर 7 (4+2+1) दिनों का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता था। प्रथम 4 दिनों में कार्यकर्ताओं को उद्देश्य के प्रति अनुप्राणित किया जाता था तथा उन्हें सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के संदर्भ से परिचित कराया जाता था। इसके उपरान्त दो दिनों में आई.पी.सी.एल पद्धति तथा प्राइमर उपयोग करने का प्रशिक्षण दिया जाता था। शेष एक दिन स्वयंसेवी शिक्षकों द्वारा आंकड़े इकठठा करने में लगाया जाता था।

उत्तर साक्षरता कार्यक्रम

उत्तर साक्षरता कार्यक्रम 12 महीनों की अवधि में क्रियान्वित किया जाता था। नवसाक्षर प्राप्त साक्षरता कुशलता को अपनी समस्याओं के समाधान हेतु प्रयोग कर सकें इसकी शिक्षा देना भी इस कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों में एक था ताकि प्राप्त साक्षरता नवसाक्षरों को अपने जीवन में उपयोगी लगे। उत्तर साक्षरता कार्यक्रम क्रियान्वयन की सीमित अवधि में यह संभव था कि कार्यात्मक साक्षरता तथा जागरूकता के सभी आयामों की समुचित जानकारी नवसाक्षरों को प्रदान न की जासके। पीएलपी के तहत मॉपिंग–अप कार्यक्रम भी शामिल था। जो सभी नवसाक्षर एनएलएम द्वारा संचालित सम्पूर्ण साक्षरता अभियानों के दौरान अपेक्षित

साक्षरता कौशल अर्जित नहीं कर पाये और ड्राप आउट में शामिल हो गये पीएलपी के दौरान उनका भी नामांकन किया जाता था। इस प्रकार पीएलपी टीएलसी के ड्राप आउट नवसाक्षरों को पुनः साक्षर होने का अवसर प्रदान करता था। पीएलपी का मुख्य उद्देश्य नियंत्रित निर्देशों के माध्यम से वस्तुतः नवसाक्षरों द्वारा प्राप्त साक्षरता कुशलता को स्थाई स्वरूप प्रदान करना तथा उन्हें दैनंदिन जीवन में समस्याओं के समाधान हेतु इसका उपयोग करना सिखाना था। यहां नवसाक्षरों को स्व–निर्देशित पद्धति के माध्यम से आगे पढ़ना–लिखना भी सिखाया जाता था।

उत्तर साक्षरता से जुड़े स्वयंसेवी शिक्षकों को कुल मिलाकर 7 दिन का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता था जिसमें 4 दिनों का प्रारंभिक प्रशिक्षण होता था तथा शेष 3 दिनों का प्रशिक्षण उन्हें कार्य के दौरान ही प्रदान किया जाता था।

सतत् शिक्षा

सतत् शिक्षा कमोबेश स्थाई तौर पर चलने वाला कार्यक्रम है। जिसमें न केवल निरक्षरों को शैक्षिक अवसर प्रदान किया जाता है बल्कि इसके तहत सम्पूर्ण साक्षरता अभियान तथा उत्तर साक्षरता कार्यक्रम के मॉपिंग–अप के दौरान छूट गये निरक्षरों, नवसाक्षरों, विद्यालयों के ड्राप आउट, शिक्षित लोगों तथा आम जनता को भी उत्तरोतर विकसित होने के लिए शैक्षिक अवसर मुहैया कराया जाता है। सतत् शिक्षा कार्यक्रमों के दौरान मुख्य ध्यान सतत् शिक्षा केन्द्र स्थापित करने पर दिया जाता है जो पुस्तकालय, वाचनालय, प्रशिक्षण केन्द्र, सूचना केन्द्र तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों के केन्द्र के रूप में प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करने हेतु कार्य करता है। स्थानीय परिस्थितियों एवं उपलब्ध संसाधनों के मद्देनजर सतत् शिक्षा केन्द्रों से समतुल्यता कार्यक्रम, जीवन स्तर विकास कार्यक्रम, आय वृद्धि कार्यक्रम तथा व्यक्तिक अभिरूचि विकास कार्यक्रम आदि संचालित करने की भी अपेक्षा की जाती है।

प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय, भारत सरकार के प्रशिक्षण दस्तावेज के अनुसार सतत् शिक्षा से जुड़े प्रेरकों, नोडल प्रेरकों तथा सहायक प्रेरकों को 11 दिनों का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता था।

निष्कर्ष

कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण किसी भी संस्थान द्वारा अपने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिहाज से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रौढ़ शिक्षा के लिए भी यह बात शत–प्रतिशत सच है। बावजूद इसके लगभग उन योजनाओं में जो आज तक क्रियान्वित किये गये प्रशिक्षण का पक्ष अत्यन्त कमजोर, अधूरा तथा अपर्याप्त था। खासतौर पर उपयुक्त स्थान के अभाव में जमीनी कार्यकर्ताओं हेतु निर्धारित प्रशिक्षणों का भविष्य हमेशा ही अनिश्चित दिखता है जिसके कारण प्रशिक्षण एक मजाक बनकर रह जाता है। दुर्भाग्य का विषय यह है कि योजनाकारों ने पूर्व के अनुभवों से कभी कोई सीख नहीं ली और जमीनी कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण

को सदैव ही न्यूनतम महत्व देते रहे जिसके कारण कार्यक्रमों का क्रियान्वयन तो प्रभावित हुआ ही अंततः उनसे अपेक्षित परिणाम भी शायद ही प्राप्त हो सके।

अतः अविलम्ब ही नियमित एवं स्थाई तौर पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने हेतु संस्थागत व्यवस्था निर्माण करने की आवश्यकता है। प्रशिक्षण हेतु आवश्यक संसाधनों यथा सेमिनार हाल, आवासीय सुविधाएं अथवा अन्य उपकरणों के मद्देनजर देखा जाय तो राष्ट्रीय स्तर पर प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय, राज्य स्तर पर राज्य शिक्षा निदेशालयों अथवा राज्य संसाधन केन्द्रों (कुछ एक को छोड़कर) के पास प्रौढ़ शिक्षा कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण प्रदान करने की कोई समुचित व्यवस्था उपलब्ध नहीं है। ये सभी संस्थाएं अंततः प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने के लिए अन्य संस्थाओं पर निर्भरशील होती हैं। अतः राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर अविलम्ब प्रशिक्षण हेतु आवश्यक न्यूनतम सुविधाएं उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। बेहतर होगा कि जिला स्तर पर भी ऐसी सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं। इसके अतिरिक्त देशभर में ऐसे संस्थाओं को चिन्हित किया जा सकता हैं एवं उन्हें दायित्व सौंपा जा सकता है जो प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए सक्षम हैं। पर दोनों ही स्थितियों में व्यवस्थित रूप से तैयार की गयी प्रशिक्षण पुस्तिका प्रशिक्षकों के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण होगी।

(इस लेख का प्रथम भाग मार्च 2010 अंक में प्रकाशित हो चुका है)

संदर्भ

1. मिशेल, गैरी – द ट्रेनर्स हैंडबुक : द ए.एम.ए गाइड टू इफैक्टिव ट्रेनिंग, न्यूयार्क, ए.एम.ए.सी.ओ.एम, 1998।
2. सोसाएटी फार पार्टीसिपेटरी रिसर्च इन एशिया – ट्रेनिंग फार ट्रेनर्स : ए मैनुअल फार पार्टीसिपेटरी ट्रेनिंग मैथोडोलाजी इन डेवलपमेंट, नई दिल्ली, सोसाएटी फार पार्टीसिपेटरी रिसर्च इन एशिया, 1987।
3. सिंह, मदन – न्यू कम्पेनियन टू एडल्ट ऐजुकेटर्स, नई दिल्ली, इंटरनेश्नल इंस्टीट्यूट ऑफ एडल्ट एण्ड लाइफलांग एजुकेशन, 2007।
4. नंदा, वी.के – एजुकेशनल टेकनोलोजी फार एडल्टस्, नइ दिल्ली, अनमोल, 1998।
5. अन्सारी, एन.ए – एडल्ट एजुकेशन इन इंडिया, नई दिल्ली, एस. चंद, 1984।
6. शाह, एस.वाई – एन एनसाइक्लोपीडिया आफ एडल्ट ऐजुकेशन, नई दिल्ली, नेश्नल लिटरेसी मिशन, 1999।
7. पेपर टाइटल्ड "ट्रेनिंग सिस्टम फार एडल्ट ऐजुकेशन फंक्शनरीज्" इन इंडिया, डी.वी शर्मा।

शिक्षा व घरेलू हिंसा

— प्रमिला जोशी

शिक्षा एक ऐसी उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें मानव समाज के सर्वांगीण विकास का प्रत्यय निहित है। प्राचीनकाल से लेकर अब तक शैक्षिक विकास की प्रक्रिया अनेकों परिवर्तनों से गुजरी परन्तु इसके उद्देश्य मूल रूप से वही रहे। भारत जैसे विशाल देश में साक्षरता की कुल दर 66.84 प्रतिशत है, जिसमें महिला साक्षरता 54.16 प्रतिशत व पुरूष साक्षरता 75.85 प्रतिशत है। यह आंकड़े दर्शाते हैं कि बड़ी संख्या में महिलाओं के हाथ अभी भी शिक्षा से दूर हैं और इसी अशिक्षा के चलते वे आज भी कई सामाजिक प्रताड़नाओं यथा लिंगभेद, सामाजिक असमानता, घरेलू हिंसा आदि से ग्रसित हैं। वर्तमान में घरेलू हिंसा महिला समाज में एक अभिशाप के रूप में उभर कर सामने आई है। आज विश्व का कोई भी ऐसा देश नहीं है जहां पर महिलाएं घरेलू हिंसा से अछूती हैं और देश का कोई भी ऐसा महिला वर्ग नहीं चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित, इस विभीषिका का शिकार न बना हो। चाहे हम विकसित या विकासशील देशों की बात करें, स्थितियां एक सी हैं। निम्न आर्थिक क्षमता वाले परिवारों के लिये जहां एक ओर घरेलू हिंसा को सामान्य घटना के रुप में लिया जाता है, वहीं दूसरी ओर उच्च आर्थिक क्षमता वाला वर्ग इसे सामाजिक प्रतिष्ठा में गिरावट के कारण सामाजिक तौर पर सार्वजनिक नहीं करता। महिला जो कि जननी, बहन, बेटी, अर्धांगिनी आदि शब्दों से गहन सम्बन्ध रखती है उसका अपने ही घर के पुरुषों द्वारा प्रताड़ित किया जाना लज्जा का विषय है। परन्तु पुरुष प्रधान समाज में इसे एक सामान्य घटना मान लिया जाता है।

सामान्यतः देखा जाय तो घरेलू हिंसा पुरुष वर्ग का महिला की शारीरिक कमजोरी पर सीधा प्रहार है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण द्वारा महिलाओं की स्थिति को जानने के लिये किए गये 29 राज्यों के सर्वेक्षण की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में विवाहित महिलाएं (37.2%) अपने जीवन काल में कभी न कभी अपने पतियों द्वारा शारीरिक यौन शोषण का शिकार होती हैं जिनमें शिक्षा से वंचित या अशिक्षित महिलाओं की संख्या अधिक है। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक शोध के अनुसार घरेलू हिंसा के पीछे दिये गये कुछ कारण महिला द्वारा खाना न बनाना, बच्चों का पालन–पोषण ठीक से न करना, पति व घरवालों से बात–बात पर बहस करना, पराये पुरुष से बात करना, स्वतन्त्र रहने की इच्छा करना आदि हैं। परन्तु तथ्य रुप में देखा जाय तो ये सारे कारण बेगाने व बनावटी एवं पुरुष वर्ग द्वारा आरोपित हैं। इन सब कारणों का जनक पुरुष का अहं एवं अपने आप को शक्तिशाली तथा स्त्री को अपने आधीन समझना है। पुरुष शारीरिक व मानसिक प्रताड़ना का इस्तेमाल करते हुये हर प्रकार से स्त्री को अपने वर्चस्व में रखने का प्रयास करता है। इन सबके पीछे एक मुख्य कारण महिला का अशिक्षित होना भी है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार भारत में 15 से 49 वर्ष की लगभग दो तिहाई

विवाहित महिलायें किसी न किसी रुप में घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं। गर्भवती महिलाओं के साथ हिंसा की दर भारत में सर्वाधिक ऑकी गई है।

घरेलू हिंसा में महिला संरक्षण कानून 26 अक्टूबर, 2006 से प्रभावी हुआ। गैर सरकारी संगठन "विमेन राइट्स इनिशिएटिव" ने 'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 की मूल्यांकन रिपोर्ट' 2007 में तैयार की। इस रिपोर्ट के अनुसार अक्टूबर 2006 से जुलाई 2007 की अवधि के दौरान कानूनी रुप से घरेलू हिंसा के 7,913 मामले सामने आये जिनकी संख्या 2008 तक 14,100 हो चुकी थी। इस रिपोर्ट के हवाले से यह ज्ञात होता है कि केरल में 1,028, आंध्र प्रदेश में 731 और दिल्ली में 607, व राजस्थान में सर्वाधिक 3,440 घरेलू हिंसा के मामले दर्ज किये गये। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो' के अनुसार इन मामलों (घरेलू हिंसा) में एक वर्ष में (2007 से 2008) 9.3% की वृद्धि हुई।

हांलाकि घरेलू हिंसा एक्ट महिला वर्ग के हाथ में एक सुरक्षा कवच की भांति है परन्तु साधारण शिक्षित वर्ग से सम्बन्ध रखने वाली महिलाओं में इस कानून की सम्पूर्ण जानकारी का अभाव है। इसके अलावा अपने घर में रहते हुये अपनों के विपरीत इस कानून का इस्तेमाल करना बहुत कठिन है। स्त्री घर व पति से भावनात्मक रुप से जुड़ी होती है और यदि वह इस कानून की लड़ाई का इस्तेमाल उनके विरुद्ध करती है तो उसे ये संबंध ताक पर रखने पड़ेंगे जो कि एक बहुत मुश्किल काम है। हांलाकि अध्ययनों से यह बात सामने आई है कि शिक्षा के बढ़ते स्तर के साथ महिलाओं के सोचने–समझने, निर्णय करने व अन्याय के खिलाफ प्रतिकार करने की क्षमता का विकास होता है।

बिहार भारतवर्ष के साक्षरता में पिछड़े राज्यों की श्रेणी में आता है, और निरक्षरों में महिलाओं की संख्या सर्वाधिक है। लेकिन देखा गया है कि साक्षरता कार्यक्रमों में भाग लेने वाली प्रौढ़ महिलाएं सामाजिक मुद्दों जैसे विवाह की कानूनी उम्र, दहेज विरोधी अधिनियम, मजदूरी निर्धारण कानून, सामाजिक अन्याय एवं बचत के संदर्भ में उत्सुक दिखाती हैं। (लाल एवं मिश्रा –1983)

शर्मा (2001) के अनुसार साक्षरता से महिलाओं में रुढ़िवादी परम्पराओं को लांघकर आगे आने की हिम्मत बढ़ी तथा समाज व परिवार का अनावश्यक भय कम हुआ। कुमारी एन. (2005) ने लिंग भेद, बाल विकास पर शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि शिक्षा के बढ़ते स्तर के साथ इन मूल्यों में परिवर्तन हुआ।

शिरुर (1993) के अनुसार, शैक्षिक स्तर का महिला के कौशल विकास व जीवन की गुणवत्ता पर भी असर पड़ता है। सीमित परिवार, कुरीतियों का दमन, लैंगिक समानता पर शिक्षा महत्वपूर्ण असर डालती है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की संस्था 'एक्शन इंडिया' बालिकाओं के सशक्तीकरण हेतु अनेक कार्यक्रम संचालित करती है। स्वास्थ्य सखी की रिपोर्ट (1999) के अनुसार 'एक्शन इंडिया' के प्रयासों से

बालिकाओं में स्वाभिमान, आत्मविश्वास तथा निर्भीकता के गुणों का विकास हुआ। सन् 1993 में भारत में केन्द्र सरकार के द्वारा निर्धन महिला को आत्मनिर्भर एवं स्वावलंबी बनाने हेतु 31 करोड़ रुपये से राष्ट्रीय महिला कोष की स्थापना की गई।

बनर्जी (2000) के अनुसार पश्चिम बंगाल के साक्षरता कार्यक्रमों (जिला साक्षरता समिति) के द्वारा ग्रामीण महिलाओं में रुढ़िवादी परम्पराओं को लांघकर आगे जाने की हिम्मत बढ़ी तथा समाज व परिवार का अनावश्यक भय कम हुआ। शर्मा, 2001 ने अपने अध्ययन में पाया कि साक्षरता का सीधा लाभ परिवारिक स्वास्थ्य एवं आर्थिक उन्नयन पर पड़ता है। केरल में जिला साक्षरता समिति के प्रयासों से अधिकांश महिलाओं ने पंचायतों में अनेक पद प्राप्त किये। बॉस (2003)के अनुसार साक्षर महिलाएं अपने कानूनी अधिकारों के प्रति भी जागरुक थीं।

जनपद पिथौरागढ़ में 'हिमालयन अध्ययन केन्द्र' नामक संगठन के क्रियाकलापों, शैक्षिक कार्यक्रमों के अध्ययन से यह तथ्य सामने आया कि साक्षरता के कारण महिलाएं 'जैन्डर जस्टिस' जैसे मुद्दों के प्रति संवेदनशील थी। यह पाया गया कि नैनीताल जनपद में 'सैणियों का संगठन' संस्था द्वारा महिलाओं में सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ आवाज उठाने की क्षमता का समावेश किया गया।

हल्द्वानी में 'निशात शिक्षा समिति' के शैक्षिक प्रयासों के फलस्वरूप आर्थिक उन्नयन को बढ़ावा मिला, परिवार नियोजन एवं बालिका शिक्षा की ओर भी इस समिति द्वारा प्रयास किये गये।

निम्न आंकड़े दर्शाते हैं कि जैसे–जैसे शिक्षा के स्तर में बढ़ोतरी होती है वैसे–वैसे घरेलू हिंसा में कमी भी होती है।

2001 की जनगणना के अनुसार साक्षरता एवं घरेलू हिंसा में महिलाओं का स्थान

जिला	घरेलू हिंसा	साक्षरता दर
बिहार	62.2 %	47.53 %
राजस्थान	46.5 %	60.41 %
मध्य प्रदेश	45.8 %	63.74 %
त्रिपुरा	44.1 %	73.19 %
मणिपुर	43.9 %	70.53 %
उत्तर प्रदेश	42.4 %	56.27 %
उत्तराखण्ड	27 %	71.62 %

स्रोत –इन्टरनेट

सुझावः–

1 शिक्षा का प्रचार व प्रसार करना जो शहरों व गांवों की महिलाओं की आवाज शोषण व उत्पीड़न के विरुद्ध बुलंद कर सके।

2 महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार हेतु विभिन्न महिला संगठनों, स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा इस दिशा में सार्थक प्रयास किया जाना।

3 विज्ञान व प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना।

4 घर व समाज के उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने हेतु महिलाओं को शिक्षित करना।

5 महिलाओं के आत्मविश्वास में बढ़ोत्तरी के प्रयास करना, जिससे उन्हें अपनी बात कह सकने में कठिनाई न हो।

6 राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों में पुरुषों के समकक्ष बनाने में सहयोग देना।

7 महिलाओं को कानूनी साक्षरता से परिचित करवाना तथा कानूनी अधिकारों की उन्हें जानकारी प्रदान करना।

8 महिलाओं को व्यावसायिक सबलता प्रदान करना जिससे उनके आत्मविश्वास व कार्यक्षमता में बढ़ोत्तरी हो सके।

निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि यदि भारतवर्ष में महिलाओं की स्थिति में सुधार लाना हो व उन्हें शोषण, अपमान, अत्याचार से बचाना हो तो उपर्युक्त सुझाावों को अमल में लाना ही समाज की पहली प्राथमिकता होनी चाहिये और यह तभी संभव है, जब महिलाओं को शिक्षित व आर्थिक रुप से सम्पन्न किया जाय एवं समाज की मुख्य धारा से जोड़ा जाय।

संदर्भ

1. कुमार पी –(2005) रूरल डेवलपमेंट : कोलाबोरेशन ऑफ ज़ी ओ़ज एण्ड एऩ ज़ी ओज इनः कुरूक्षेत्र, 53:10।
2. कुमारी. एन (2005) फेमिली सपोर्ट बाइ विमेन एण्ड चिन्ड्रन, सोशियल वैलफेयर 51. 12. 6।
3. बॉस (2003)एन. जी. ओ. एण्ड रूरल डवलपमेन्ट, थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस.,कनसेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी. नई दिल्ली।
4. जनगणना(2001)
5. पटेल. आई. एवं दिघे़ ए (1997)जेन्डर इश्यू इन लिटरेसी एडूकेशन वर्किंग पेपर 108, आनन्द इन्सटीट्यूट ऑफ रूरल मेनेजमेन्ट आणन्द।,
6. शर्मा. (2001) एडल्ट एजूकेशन प्रोग्राम्स इन इंडिया, इन रिर्सच ऑन रिर्सचेज (मदन सिंह) स्टेट रिर्सोस सेन्टर, लिटरेसी हाउस, लखनऊ, यू. पी. 144–145.
7. शिरूर.आर. आर.(1993) विमेन डेवलपमेंट रिक्वायर्स :ए रेडिकल अप्रोच, इन्डियन जनरल ऑफ एडल्ट एडूकेशन, 54 (2):9

भारत में किशोर शिक्षा की आवश्यकता

–हंसराज पाल

–जितेन्द्र कुमार पाटीदार

विश्व में हमारा देश प्रगतिशील देशों के अंतर्गत आता है जिसका मुख्य आधार यहाँ की ऊर्जावान युवा पीढ़ी है। 21 वीं शताब्दी युवाओं की है। इस शताब्दी में युवाओं को अपनी प्रतिभा का पूर्ण विकास करने के लिए समाज द्वारा आजादी प्रदान की गई है जहां वे स्वतंत्र जीवन–शैली अपनाकर जीवन यापन करते हैं। इसी आजादी के आधार पर आज देश के विभिन्न क्षेत्रों जैसे–सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, विज्ञान एवं तकनीकी, सांस्कृतिक, खेल–कूद आदि में युवाओं के योगदान को देखा जा सकता है।

लेकिन कतिपय युवाओं में भटकाव भी देखने को मिलता है जहां वे अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करते हुए तथा पाश्चात्य संस्कृति की नकल करते हुए विवाह पूर्व यौन सम्बन्ध, विवाहेत्तर यौन सम्बन्ध, समलिंगी यौन सम्बन्ध, नशीली दवाओं का सेवन (Drug Abuse) आदि को अपने जीवन पद्धति का अनिवार्य हिस्सा बना लेते हैं। वे माता–पिता एवं बड़ों का आदर नहीं करते तथा अपने मुख्य कार्य अर्थात् अध्ययन को प्राथमिकता न देकर असामाजिक एवं अनैतिक गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं।

उक्त नकारात्मक प्रभावों तथा समाज विरोधी गतिविधियों के प्रति किशोरों एवं किशोरियों को जागरूक करने तथा उचित निर्णय लेने योग्य बनाने के लिए किशोर शिक्षा की आवश्यकता प्रतिपादित होती है।

किशोर शिक्षा, एक नवीनतम शैक्षिक विषय है, जो किशोर एवं किशोरियों की बढ़ने की प्रक्रिया (Process of growing up) में आने वाली जटिल (Critical) समस्याओं का सामना करने वाले तत्वों को विद्यालयीन पाठ्यक्रम में शामिल करने के लिए अतिआवश्यक माँग के रूप में उभर कर आयी है।

किशोरावस्था, मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं गर्भावस्था, शैशवावस्था तथा बाल्यावस्था के पश्चात् प्रारम्भ होती है, जो 13 वर्ष से 19 वर्ष तक रहती है। इस अवस्था में किशोर एवं किशोरियों में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, सांस्कृतिक, नैतिक आदि विशेषताओं या गुणों का तीव्र गति से विकास होता है।

हमारे देश में किशोरों की वर्तमान जनसंख्या लगभग दस करोड़ (जनगणना–2001 के अनुसार) से अधिक है और संभवतः यह बचपन से परिपक्वता की ओर अग्रसर हो रही सबसे बड़ी पीढ़ी है। इस अवस्था में वे वयस्कता की दहलीज पर खड़े होते हैं। अतः उन्हें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता होती है, जो उनकी विकास की प्रक्रिया विशेषतः प्रजनन एवं यौन स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं

की पूर्ति में सहायक हो तथा उनमें इस अवस्था में आने वाली समस्याओं का सामना करने का कौशल विकसित करें।

किशोरावस्था का अर्थ

विकास की प्रक्रिया में बालक विकास की कुछ अवस्थाओं अथवा सोपानों से होकर गुजरता है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने विकास की विभिन्न अवस्थाओं अथवा सोपानों को बताया है। सामान्य रूप से मानव विकास को पाँच अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है –

तालिका – 1 : मानव की अवस्थाओं, उनकी लगभग उम्र तथा अवधि को दर्शाती तालिका

स. क्र.	अवस्था	लगभग उम्र	अवधि
1.	गर्भावस्था	गर्भाधान से जन्म तक	9 माह 10 दिन
2.	शैशवावस्था	जन्म से 5 वर्ष तक	5 वर्ष
3.	बाल्यावस्था	6 वर्ष से 12 वर्ष तक	7 वर्ष
4.	किशोरावस्था	13 वर्ष से 19 वर्ष तक	7 वर्ष
5.	प्रौढ़ावस्था	20 वर्ष से अधिक	60 से 70 वर्ष

किशोरावस्था जन्मोपरांत मानव जीवन की तृतीय अवस्था है, जो बाल्यावस्था की समाप्ति के उपरांत प्रारम्भ होती है तथा 13 वर्ष से 19 वर्ष तक रहती है। यद्यपि व्यक्तिगत विभिन्नताओं, जलवायु आदि के कारण किशोरावस्था की अवधि में कुछ अंतर पाया जाता है, परन्तु फिर भी, प्रायः 13 से 19 वर्ष की उम्र के मध्य की अवधि को किशोरावस्था कहा जाता है। यहाँ यह स्पष्ट करना उचित होगा कि विकास की इन अवस्थाओं तथा अवधि के सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों में मतभेद पाए जाते हैं।

किशोरावस्था को अंग्रेजी में Adolescence कहते है। Adolescence शब्द लेटिन भाषा के Adolescere से बना है, जिसका अर्थ होता है – परिपक्वता की ओर बढ़ना (To Grow to Maturity)। अतः किशोरावस्था वह अवस्था है, जिसमें बालक परिपक्वता की ओर अग्रसर होता है तथा जिसकी समाप्ति पर वह पूर्ण परिपक्व व्यक्ति बन जाता है। संवेगात्मक उथल–पुथल तथा तनाव की अवस्था होने के कारण कुछ मनोवैज्ञानिक इसे समस्यात्मक अवस्था (Problematic Age) अथवा तूफान एवं तनाव (Storm & Stress) की अवस्था भी कहते हैं।

किशोरावस्था की विशेषताएँ

किशोरावस्था, जीवन का सबसे कठिन एवं नाजुक समय है। इस दौरान किशोर एवं किशोरियों में शारीरिक, सामाजिक, मानसिक तथा संवेगात्मक दृष्टि से क्रान्तिकारी परिवर्तन होते हैं।

1. शारीरिक विकास

किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक विकास से सम्बन्धित महत्वपूर्ण शारीरिक विकास की विशेषताएँ – (1) लंबाई (Height) – किशोरावस्था में किशोर तथा किशोरियों की लम्बाई तीव्र गति से बढ़ती है। किशोरावस्था में किशोरों की लम्बाई, किशोरियों से अधिक रहती है। (2) भार (Weigh)– किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों के भार में वृद्धि होती है। 3) सिर तथा मस्तिष्क (Head and Brain) – किशोरावस्था में सिर तथा मस्तिष्क का विकास जारी रहता है, परन्तु इसकी गति काफी मंद हो जाती है। लगभग 16 वर्ष की उम्र तक सिर तथा मस्तिष्क का पूर्ण विकास हो जाता है। (4) हड्डियाँ (Bones) – किशोरावस्था में हड्डियों के दृढ़ीकरण अर्थात् अस्थिकरण (Ossification) की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप अस्थियों का लचीलापन समाप्त हो जाता है तथा वे दृढ़ हो जाती है। (5) दाँत (Teeth) – किशोरावस्था में प्रवेश करने से पूर्व बालक तथा बालिकाओं के लगभग 27–28 स्थायी दाँत निकल आते हैं। व्यक्ति के प्रज्ञादन्त (Wisdom Teeth) प्रायः किशोरावस्था के अन्तिम वर्षों में अथवा प्रौढ़ावस्था के प्रारम्भिक वर्षों में निकलते हैं। (6) माँसपेशियाँ (Muscles) – किशोरावस्था में शरीर की माँसपेशियों का विकास तीव्र गति से होता है। किशोरावस्था की समाप्ति पर माँसपेशियों का भार शरीर के कुल भार का लगभग 45% हो जाता है तथा माँसपेशियों के गठन में भी अपेक्षाकृत दृढ़ता आ जाती है। (7) अन्य अंग (Other Organs) – किशोरावस्था के अन्त तक किशोर तथा किशोरियों की सभी ज्ञानेन्द्रियों (आँख, कान, नाक, त्वचा तथा जिव्हा) तथा कर्मेन्द्रियों (हाथ, पैर, मुख आदि) का पूर्ण विकास हो जाता है। वे शाारीरिक दृष्टि से परिपक्व हो जाते हैं। शरीर के सभी अंग पुष्ट तथा सुडौल दिखाई देते हैं।

2. मानसिक विकास

किशोरावस्था में मानसिक विकास उच्चतम सीमा पर पहुँचने लगता है। इस अवस्था में मानसिक विकास से सम्बन्धित प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार है – (1) मानसिक क्षमताएँ (Mental Capacities) – किशोरावस्था में मानसिक क्षमताओं का स्वरूप लगभग निश्चित हो जाता है। किशोरों में सोचने–समझने, विचार करने, सामान्यीकरण करने तथा समस्याओं का समाधान करने की उच्च स्तरीय मानसिक क्षमताएँ विकसित हो जाती है, परन्तु वे प्रौढ़ों के समान उनका प्रभावशाली ढंग से उपयोग नहीं कर पाते हैं। ध्यान, चिन्तन, तर्क, स्मरण इत्यादि योग्यताएँ अपनी अधिकतम सीमा को छूने लगती है। यह माना जाता है कि सोलह वर्ष की उम्र तक किशोर एवं किशोरियों का पूर्ण मानसिक विकास हो जाता है। (2) कल्पना शक्ति (Imagination Power) – किशोरावस्था में किशोर वास्तविक जगत में रहते हुए भी कल्पना लोक में विचरण करते हैं। कल्पना की अधिकता के कारण उनमें दिन में सपने देखने की प्रवृत्ति जागृत हो जाती है। किशोरों की अपेक्षा किशोरियों में कल्पना शक्ति अधिक होती है। (3) भाषा (Language) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों का शब्द भंडार बढ़ने लगता है। चिन्तन, तर्क तथा कल्पनाशक्ति के विकास

का प्रभाव किशोर एवं किशोरियों के भाषा विकास पर भी पड़ता है। (4) रुचियों का विकास (Development of Interests) – किशोरावस्था में वास्तविक रुचियों का विकास तीव्र गति से होता है। शारीरिक स्वास्थ्य तथा आकर्षण, पौष्टिक भोजन, वेशभूषा, पढ़ाई–लिखाई, आदर्श, भावी रोजगार, चलचित्र, दूरदर्शन, साहित्य पढ़ने इत्यादि में किशोर–किशोरियों की विशेष रुचि होती है। इस अवस्था में उनकी रुचियाँ वास्तविकता पर आधारित होती है।

3. सामाजिक विकास

किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों का सामाजिक परिवेश विस्तृत हो जाता है। शारीरिक, मानसिक तथा संवेगात्मक परिवर्तनों के साथ–साथ उनके सामाजिक व्यवहार में भी परिवर्तन आना स्वाभाविक है। किशोरावस्था में सामाजिक विकास की विशेषताएँ इस प्रकार हैं – (1) समूह का निर्माण (Formulation of Groups) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियाँ अपने–अपने समूहों का निर्माण करते हैं। इस समूह का उद्देश्य मनोरंजन करना होता है। पर्यटन, नृत्य, संगीत, पिकनिक इत्यादि के लिए समूह का निर्माण किया जाता है। (2) मैत्री भावना का विकास (Development of Friendship) – किशोरावस्था में मैत्री भावना विकसित हो जाती है। प्रारम्भ में किशोर किशोरों से तथा किशोरियाँ किशोरियों से मित्रता करती हैं, परन्तु उत्तर किशोरावस्था में किशोरियों की रुचि किशोरों से मित्रता की तथा किशोरों की रुचि किशोरियों से मित्रता करने की हो जाती है। (3) समूह के प्रति समर्पण (Devotion to the Group) – किशोरों में अपने समूह के प्रति अत्यधिक समर्पण होता है। समूह के सभी सदस्यों के आचार–विचार, वेशभूषा, तौर–तरीके आदि लगभग एक ही जैसे होते हैं। किशोर अपने समूह के द्वारा स्वीकृत बातों को आदर्श मानता है तथा उनका अनुकरण करने का प्रयास करता है। (4) सामाजिक गुणों का विकास (Development of Social Qualities) – समूह के सदस्य होने के कारण किशोर–किशोरियों में उत्साह, सहानुभूति, सहयोग, सद्भावना, नेतृत्व आदि सामाजिक गुणों का विकास होने लगता है। (5) सामाजिक परिपक्वता की भावना का विकास (Development of the Feeling of Social Maturity) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों में वयस्क व्यक्तियों की भाँति व्यवहार करने की इच्छा प्रबल हो जाती है। वे अपने कार्यों तथा व्यवहारों के द्वारा समाज में सम्मान प्राप्त करना चाहते हैं। (6) विद्रोह की भावना (Feeling of Revolt) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों में अपने माता–पिता तथा अन्य परिवारजनों से संघर्ष अथवा मतभेद करने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है। यदि माता–पिता उनकी स्वतंत्रता कम करके उनके जीवन को नैतिक आदर्शों का उदाहरण देकर उनका अनुकरण करने पर बल देते हैं, तो प्रायः किशोर एवं किशोरियाँ उनके प्रति विद्रोह कर देते हैं। (7) व्यवसाय चयन में रुचि (Interest in Selection of Vocation) – किशोरावस्था के दौरान किशोरों की व्यावसायिक रुचियाँ विकसित होने लगती हैं। वे अपने भावी व्यवसाय का चुनाव करने के लिए सदैव चिन्तित रहते हैं। प्रायः किशोर अधिक धनार्जन, सामाजिक प्रतिष्ठा और अधिकार सम्पन्न व्यवसायों को अपनाना चाहते हैं। (8) बहिर्मुखी प्रवृत्ति (Extrovert Tendency) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों में बहिर्मुखी प्रवृत्ति का विकास होता है। किशोर एवं किशोरियों

को अपने समूह के क्रियाकलापों तथा विभिन्न सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने के अवसर मिलते हैं, जिसके फलस्वरूप उनमें बहिर्मुखी रुचियाँ विकसित होने लगती है। (9) राजनैतिक दलों का प्रभाव (Influence of Political Parties) – किशोरावस्था में राजनैतिक दलों की विचारधाराओं का किशोरों पर प्रभाव पड़ता है। किशोर प्रायः किसी राजनैतिक विचारधारा से प्रभावित होकर किसी राजनैतिक दल के अनुयायी बन जाते हैं। दल में सम्मान, प्रतिष्ठा तथा प्रशंसा प्राप्त करने के लिए किशोर उत्साह तथा समर्पण भाव से जनकल्याण के कार्य करते हैं।

4. संवेगात्मक विकास

किशोरावस्था में संवेगात्मक व्यवहार में अनेक परिवर्तन आते हैं। किशोरावस्था में होने वाले संवेगात्मक विकास की कुछ प्रमुख विशेषताएँ –

(1) अनुभूति प्रधान जीवन (Feeling Dominated Life) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों का जीवन अत्यधिक अनुभूति प्रधान होता है। किशोर एवं किशोरियों में दया, प्रेम, क्रोध, सहानुभूति, सहयोग आदि प्रवृत्तियाँ अधिक प्रबल होती हैं। (2) विरोधी मनोदशाएँ (Opposite Moods)– किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों में विरोधी मनोदशाएँ दिखाई देती हैं। लगभग समान परिस्थितियों में कभी वह प्रसन्न तथा कभी दुःखी दिखाई देते हैं। (3) संवेगों में विभिन्नताएँ (Differences in Emotions) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों के संवेगों में अत्यधिक विभिन्नताएँ होती हैं। वे कभी हतोत्साहित तथा कभी उत्साह से परिपूर्ण, कभी उत्साहहीन, कभी अत्यधिक प्रसन्न तथा कभी अत्यधिक खिन्न, कभी अत्यधिक क्रोधी तथा कभी अत्यधिक सहानुभूतिपूर्ण, कभी अत्यधिक दयालु तथा कभी अत्यधिक खिन्न दिखाई देते हैं। (4) कामुक प्रवृत्ति (Sex Instinct) – किशोरावस्था में काम भावना की व्यवहार में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। काम भावना की तीव्रता के कारण किशोर एवं किशोरियों में प्रेम संवेग बढ़ जाते हैं। स्व–प्रेम (Auto-erotism) समलिंगी प्रेम (Homo Sexuality) तथा विषम लिंगी प्रेम (Hetro Sexuality) के रूप में किशोर एवं किशोरियाँ अपनी काम प्रवृत्ति की संवेगात्मक अभिव्यक्ति करते हैं। (5) वीर पूजा (Hero Worship) – किशोरावस्था में वीर पूजा की भावना विकसित हो जाती है। कल्पनाशील होने के कारण किशोर एवं किशोरियों को कहानी, उपन्यास, सिनेमा, इतिहास तथा वास्तविक जीवन के नायक व नायिकाएँ अपने आदर्शों तथा वीरोचित गुणों से मुग्ध कर लेते हैं। (6) स्वाभिमान की भावना (Feeling of Self-Respect) – किशोरावस्था में स्वाभिमान की भावना प्रबल होती है। किशोर एवं किशोरियाँ अपने आत्मगौरव, स्वाभिमान तथा सम्मान पर किसी प्रकार का आघात सहन नहीं करना चाहते हैं। (7) अपराध प्रवृत्ति (Delinquency) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों को न तो बालक समझा जाता है तथा न ही प्रौढ़, जिसके कारण उन्हें संवेगात्मक व्यवहार में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। वातावरण में समायोजन करने के प्रयास की असफलता से उनमें निराशा की भावना विकसित होने लगती है, जो उन्हें अपराध करने के लिए प्रेरित करती है। प्रेम का अभाव, इच्छापूर्ति में बाधा, जीवन में निराशा तथा नवीन अनुभवों के कारण किशोरावस्था में कभी–कभी अपराध प्रवृत्ति

विकसित होने लगती है। (8) चिन्तित व्यवहार (Anxious Behaviour) – किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियाँ अनेक बातों के प्रति चिन्तित रहते हैं। वह अपने रंग–रूप, स्वास्थ्य, मान–सम्मान, आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्वीकृति, शैक्षिक प्रगति, भावी व्यवसाय आदि के प्रति सदैव चिन्तित रहते हैं। (9) स्वतंत्रता की भावना (Feeling of Independence) – किशोरावस्था में स्वतंत्रता की भावना अत्यधिक प्रबल होती है। किशोर एवं किशोरियाँ अपने परिवार तथा समाज के आदर्शों, परम्पराओं, रीति–रिवाजों अंधविश्वासों आदि को न मानकर अपनी स्वतंत्र जीवन शैली अपनाना चाहते हैं। वे तर्क–वितर्क करके रीति–रिवाजों तथा सामाजिक आदर्शों की उपयुक्ता को जानना चाहते हैं।

किशोरावस्था में विशेष पोषण की आवश्यकता

किशोर एवं किशोरियों को किशोरावस्था में पोषण आहार पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। पोषण के सम्बन्ध में टर्नर ने कहा है कि ''पोषण उन क्रियाओं का नियोजन है, जिनके द्वारा जीवित प्राणी अपनी क्रियाशीलता को बनाए रखने के लिए अंगों की वृद्धि एवं उनके पुनर्निर्माण हेतु आवश्यक पदार्थों को प्राप्त करता है और उनका उपयोग करता है।'' अतः किशोरावस्था में किशोर एवं किशोरियों का शारीरिक विकास तीव्र गति से होता है, इसलिए उन्हें अधिक पोषक तत्वों जैसे – कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, आयोडीन, लोहा, कैल्शियम, फास्फोरस आदि की आवश्यकता होती है।

किशोर शिक्षा का अर्थ

किशोर शिक्षा का अर्थ है, ऐसी शिक्षा, जो किशोर–किशोरियों को प्रजनन स्वास्थ्य सम्बन्धी सही और अधिकृत तौर पर शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया की जानकारी उपलब्ध कराए, जिससे देश के विकास में उनकी सकारात्मक भूमिका हो और वे उत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार कर सकें। किशोर शिक्षा – (1) एक नवाचार है। (2) प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति चेतना की शिक्षा है। (3) शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक परिवर्तन सम्बन्धी शिक्षा है। (4) किशोर अवस्था में घटित होने वाले परिवर्तनों को पहचानने और समझने की शिक्षा है। (5) शिक्षार्थियों के यौन व्यवहार को सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों में ढ़ालने की शिक्षा है। (6) एड्स/एच. आई. वी. के प्रति सही जानकारी, चेतावनी और सावधानी की शिक्षा है। (7) विपरीत लिंग के प्रति आदर भाव विकसित करने की शिक्षा है। (8) पारिवारिक जीवन की शिक्षा है। (9) आत्मसंयम विकसित करने की शिक्षा है। (10) स्त्रियों को यौन भावना की दृष्टि से नहीं देखने की शिक्षा है। (11) यौन स्वेच्छा एवं यौन रोगों के प्रति जागरूक करने की शिक्षा है। (12) नशीले/मादक पदार्थों के सेवन से होने वाली हानियों एवं दुष्प्रभावों की जानकारी प्रदान करने की शिक्षा है।

किशोर शिक्षा की आवश्यकता

विद्यालयीन स्तर पर किशोरों की शैक्षिक प्रतिक्रियाओं/गतिविधियों के लिए किशोर शिक्षा

आवश्यक है। इसका लक्ष्य, किशोर तथा किशोरियों को बढ़ने की प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं, विशेषकर प्रजनन स्वास्थ्य की आवश्यकताओं एवं परिवर्तन के दौर में समस्याओं को समझने योग्य बनाने के लिए वैज्ञानिक जानकारी प्रदान करना है। हमारे देश में किशोर शिक्षा की विशेष आवश्यकता है, क्योंकि विद्यालयीन पाठ्यक्रम में प्रजनन स्वास्थ्य के कुछ तत्व जैसे – किशोरावस्था में यौन विकास, एच. आई. वी./एड्स एवं नशीली दवाओं के सेवन (Drug Abuse) की आदतें तथा इनका प्रजनन स्वास्थ्य के साथ अन्तर्सम्बन्ध सम्मिलित नहीं है। किशोर एवं किशोरियों को केवल जैविकीय घटकों की जानकारी देने से पूर्ण शिक्षा प्रदान नहीं की जाती। शिक्षा द्वारा अभिवृत्तियों, व्यवहारों एवं मूल्यों में वांछित परिवर्तन करने की आवश्यकता पर बल देना चाहिए।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य कारणों से भी किशोर शिक्षा की आवश्यकता प्रतीत होती है – (1) किशोरों के, किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक, मानसिक व संवेगात्मक परिवर्तनों से उत्पन्न समस्याओं का सही निराकरण न होना। (2) बढ़ते यौन अपराध, हत्या, आत्महत्या व बलात्कार की बढ़ती घटनाएँ। (3) किशोरों में विवाह पूर्व यौन सम्बन्धों के दुष्प्रभावों की जानकारी का अभाव। (4) एड्स का द्रुत गति से प्रसार। (5) किशोरों में मादक एवं नशीले पदार्थों के सेवन से उत्पन्न दुष्परिणामों की जानकारी का अभाव।

किशोर शिक्षा के उद्देश्य

किशोर शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं – (1) किशोर विद्यार्थियों में होने वाले शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों की जानकारी प्रदान करना। (2) किशोर विद्यार्थियों में प्रजनन एवं यौन स्वास्थ्य के प्रति स्वस्थ्य अभिवृत्ति उत्पन्न करना। (3) एच. आई. वी. संक्रमण के परिणामों, एड्स के खतरों, कारणों एवं उससे बचाव के तरीकों की जानकारी प्रदान करना। (4) नशीली दवाओं/मादक पदार्थों के सेवन से होने वाले परिणामों से सचेत करना तथा उनके सेवन के प्रति उचित दृष्टिकोण का विकास करना।

किशारों पर जनसंचार के माध्यमों का नकारात्मक प्रभाव

शिक्षा प्रदान करने के लिए शैक्षिक अवसरों का विस्तार करने से विद्यालयों में लड़के एवं लड़कियों कि संख्या में वृद्धि हुई है, जिससे विवाह की उम्र में भी वृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य, सुरक्षा तथा पोषण में सुधार आया है। जनसंचार के माध्यमों के प्रसार का असर इतना प्रभावी है कि सांस्कृतिक व नैतिकता के परम्परागत आधार जैसे – अखबार, पत्रिकाएँ, उपन्यास आदि को भी किशोरावस्था में समयपूर्व यौन जागरुकता के लिए जिम्मेदार पाया गया। जिसके परिणामस्वरुप युवा लोगों में यौन परिपक्वता व विवाह के मध्य अधिक अंतर तथा उनके वैवाहिक सम्बन्ध से पूर्व यौन सम्बन्धों की सम्भावनाओं में वृद्धि पाई गई। महानगरों से कस्बों तक यौन विषयक सोच एवं व्यवहार में आ रहे परिवर्तन के मद्देनजर विवाह पूर्व व विवाहेत्तर यौन सम्बन्धों का क्षेत्र काफी बढ़ा है।

भारत में विभिन्न जनसंचार माध्यमों के समाचारों में यौन अपराध बढ़ने, विशेषकर युवा लड़कियों

तथा कुछ बालिकाओं के यौन शोषण की समस्या पर भी अधिक बल दिया जाता है। ऐसी स्थिति में युवा बालकों में विपरीत लिंग के प्रति आदर तथा यौन के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का विकास करने के लिए शिक्षा प्रदान करना अति आवश्यक है।

सामाजिक विकास में नवीन प्रवृत्तियाँ जैसे – आधुनिकीकरण, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण तथा रहन–सहन के तरीकों में परिवर्तन आया जिससे परम्परागत मूल्य प्रणाली (Value System) के कारण यौन सम्बन्धी व्यवहार पर व्यक्तिगत प्रभाव कमजोर होने लगा है।

जनसंचार माध्यम असभ्य यौन प्रसारण के रूप में युवाओं एवं बालकों के लिए खुला हो गया है, जिससे सुरक्षित संस्कृति का क्षरण हो रहा है। इसके अलावा उन युवाओं को भी मदद मिल रही है, जो समाज में किसी व्यक्ति के पारम्परिक मूल्य (इज्जत) की परवाह नहीं करते हैं। विपरीत लिंग के प्रति आदर तथा जिम्मेदारीपूर्वक यौन व्यवहार एवं विवाह पूर्व तथा विवाहेत्तर यौन सम्बन्धों के विरुद्ध सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों का विकास करने की आवश्यकता है।

संदर्भ

1. गुप्ता, एस. पी. एवं गुप्ता, अलका : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान. इलाहबाद : शारदा पुस्तक मंदिर, 2001.
2. पाल, हंसराज : प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान. दिल्ली : हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, 2006.
3. पाल, हंसराज एवं पाल, आशा : अधिगम निर्योग्यों की शिक्षा. दिल्ली : शिप्रा प्रकाशन, 2007.
4. माथुर, एस. एस. : शिक्षा मनोविज्ञान. आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, 2002.
5. Dubey, S. N. : Population of India. Delhi : Authourspress, 2001.
6. Khan, R. S. (Ed.) : Population Education - Content and Methodology. New Delhi : Jamia Millia Islamia, 2000.
7. NCERT : Reconceptualised Population Education : A Training Material. New Delhi : NPEP, NCERT, 2003.
8. Pandey, J. L. and et al : Adolescence Education in Schools - Package of Basic Materials. New Delhi : NPEP, NCERT, 1999.
9. Seth, Mridula : Life skills of Adolescence Education and Competencies of Counsellors. Indian Journal of Population Education. New Delhi : Indian Adult Education Association, No. 11, Dec. 2000.
10. Yadav, Saroj : Skill Building : The Focus of Adolescence Education in Schools, Journal of Indian Education. New Delhi : NCERT, Volume -18, No. 02, August 2002, Page No. 58-71.
11. Yadav, Saroj : Awareness and Attitude of Student towards Adolescent Reproductive Health : A Base Line Survey. New Delhi : NPEP, NCERT, 2001.

उत्तराखण्ड राज्य में शैक्षिक उन्नयन एवं महिला सशक्तीकरण

— संगीता पवार

महिला सशक्तीकरण

कोई भी राष्ट्र या समाज आगे तभी बढ़ सकता है, जब उसे आगे बढ़ाने में उसके सभी सदस्यों की बराबर की सहभागिता हो। नारी को पीछे छोड़ समाज खुद भी पीछे हो जाता है। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान महात्मा गांधी ने इस तथ्य को महसूस किया और नारी भी देश के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संघर्ष में अपना योगदान दे, इस हेतु विशेष प्रयास भी किए। (गुप्ता, 2002)

समकालीन विश्व में हवा महिलाओं के पक्ष में चल रही है। सभी जगह इनके सर्वांगीण विकास के अनुकूल वातावरण का निर्माण हो रहा है। एक बड़े पैमाने पर 21 वीं सदी को महिला सदी भी कहा जाने लगा है। अब महिला अपनी अन्तर्निहित क्षमता द्वारा, आत्मविश्वास तथा साहस के साथ पुरूष प्रधान समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपने अस्तित्व का अहसास दिला रही है और इस हेतु किए गये तमाम प्रयासों में सफलताएं अर्जित कर रही हैं। वर्तमान दौर भारतीय महिलाओं के लिए भी सुखद एवं सकारात्मक है। आज हजारों भारतीय महिलाएं औद्योगिक, शैक्षिक, प्रशासनिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी करके आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हो रही हैं।

महिला सशक्तीकरण से अभिप्राय

महिला सशक्तीकरण से अभिप्राय उन्हें सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक तथा राजनीतिक स्तर पर आत्मनिर्भर बना सशक्त करने से है। आजादी के बाद महिलाओं की जीवन शैली में काफी बदलाव आया है। अब वह साहस के साथ घर आंगन की परिधि से बाहर निकल रही हैं और उन्हें पुरूषों के बराबर होने का गौरव भी प्राप्त हो रहा है। आज की महिला एक कुशल व्यापारी है, वित्तीय विशेषज्ञ है, वैज्ञानिक, इंजीनियर, डाक्टर, साहित्यकार और क्या कुछ नहीं है। सेना के विभिन्न अंगों से वह जुड़ चुकी है। पहले माँ, बहन, दादी, नानी, पुत्री, पत्नी के रूप में ही उसकी पहचान बन पाती थी। लेकिन बदले हुए परिवेश में अब वह प्रत्येक क्षेत्र में सक्रिय दिखाई दे रही हैं और अपनी विशिष्ट छाप छोड़ रही है।

राष्ट्रीय स्तर पर महिला सशक्तीकरण के प्रयास

महिला सशक्तीकरण की अवधारणा को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए सरकार ने वर्ष 2001 को

महिला सशक्तीकरण वर्ष के रूप में मनाया। इतना ही नहीं, सरकार समय–समय पर विभिन्न कानूनों या योजनाओं को भी महिला कल्याण के लिए चलाती आई है। चाहे वह घरेलू हिंसा अधिनियम 2006 हो या स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, 73वां संविधान संशोधन हो जिसके तहत पंचायतों में 33 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की गई है, या फिर महिलाओं को स्वास्थ्य शिक्षा तथा पोषण सेवा उपलब्ध कराने वाली समन्वित बाल विकास कार्यक्रम। इन सभी ने निश्चित रूप से महिलाओं में साक्षरता कौशल विकास के साथ–साथ जीवन की गुणवता में अभूतपूर्व सुधार किया है। उनमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है, सीमित परिवार के महत्व की समझ बढ़ी है, सामाजिक कुरीतियों के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है तथा लैंगिक समानता हेतु जागरूकता बढ़ी है। साथ ही वे आर्थिक एवं राजनीतिक सशक्तीकरण की ओर भी अग्रसर हुई हैं।

उत्तराखंड राज्य में 'महिला सशक्तीकरण' हेतु विभिन्न कार्यक्रम

भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों में सरकारी व गैर सरकारी संगठन महिला विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। सन् 2000 में निर्मित उत्तरांचल राज्य भी सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के प्रयासों से अनछुआ नहीं है। उत्तरांचल राज्य के बागेश्वर जनपद के विकास खंड कपकोट में स्थापित ग्रामीण उत्थान समिति ने सीमान्त ग्रामीण क्षेत्र में महिला सशक्तीकरण कार्यक्रम के तहत महिलाओं को प्रत्यक्ष रूप से जागरूकता कार्यक्रमों से जोड़ा है जिसमें उन्हें बाल शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा तथा स्वास्थ्य शिक्षा के प्रति जागरूक किया गया है। साथ ही स्वावलम्बी बनाने हेतु उन्हें आर्थिक उन्नयन के कार्यक्रम से भी जोड़ा गया है।

जनपद अल्मोड़ा में स्थापित 'उत्तराखंड सेवा निधि' नामक गैर सरकारी संगठन द्वारा कुमाऊं व गढ़वाल के अनेक गांवों में महिला सशक्तीकरण हेतु अनेक कार्यक्रम चलाए गए हैं, जिसमें महिला समूहों का गठन करना एवं बालवाड़ी विकास कार्यक्रमों से जोड़ते हुए महिलाओं को पर्यावरण संवर्धन हेतु संवेदनशील बनाना, स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रमों से जोड़ना तथा सरकारी दुग्ध समितियों के माध्यम से आर्थिक उन्नयन के कार्यक्रम को सम्पादित करने जैसे कार्य सम्मिलित हैं। इसी क्रम में 'सीड' (विकास खण्ड द्वाराहाट, जनपद अल्मोड़ा) द्वारा भी महिला सशक्तीकरण के कार्यक्रम को प्राथमिकता दी गई है। समिति का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को संगठित कर शैक्षिक, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से सशक्त बनाना है।

'हिमालयन अध्ययन केन्द्र' महिला संगठन 'फल्याटी' 'सैणराथी', 'ससखेत' व 'आरोही','चिराग', 'सेवक' तथा 'हार्क' (हिमालयन एक्शन, रिसर्च सेंटर) जैसे अन्य गैर सरकारी संगठनों के क्रियाकलापों द्वारा महिला सशक्तीकरण की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

भारत सरकार एवं राज्य संसाधन केन्द्र लखनऊ के सहयोग से 1999 में 'रूलक' (आर.एल.ई. के. – रूरल लिटिगेशन एण्ड एन्लाइटमेंट केन्द्र), देहरादून द्वारा संचालित शैक्षिक कार्यक्रमों से

लाभार्थी महिलाओं में स्वास्थ्य एवं शिक्षा के प्रति सकारात्मक सोच विकसित हुई है। संगठन के प्रयासों के फलस्वरूप महिलाएं पारस्परिक विरोधों के बावजूद 'स्वयं सहायता समूह' गठित करने लगी हैं। इन समूहों द्वारा हिमालयन हर्बल हनी (3 एच.) प्रोजेक्ट में योगदान देने के कारण इसका बाजार देशव्यापी हो गया है तथा महिलाओं के आर्थिक विकास को बल मिला है।

राज्य सरकार द्वारा प्रस्तावित विभिन्न योजनाएं

उत्तराखण्ड राज्य निर्माण में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। राज्य सरकार ने भी राज्य के अर्थव्यवस्था की रीढ़ मानी जाने वाली महिलाओं को उचित सम्मान दिया है व उनकी समस्याओं के समाधान के प्रति अपनी वचनबद्धता दोहराई है। राज्य सरकार ने महिलाओं को मुख्य धारा से जोड़ने के लिए पंचायतों में 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की है साथ ही जेंडर बजट में 1205 करोड़ रूपये धनराशि की अलग से व्यवस्था की है। उनके नाम पर सम्पति क्रय करने पर स्टाम्प शुल्क में छुट की सीमा 10 लाख से बढ़ाकर 20 लाख रूपये किया गया है।

नन्दा देवी कन्या योजना

राज्य में लैंगिक असमानता दूर करने, कन्या भ्रूण हत्या रोकने, बाल विवाह को रोकने तथा कन्या शिशु को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से 'नन्दा देवी कन्या योजना' प्रारम्भ किया गया है।

गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों में 01 जनवरी, 2009 के बाद जन्मी कन्या शिशु को राज्य सरकार द्वारा 5000 रूपयों की धनराशि एफ.डी. के रूप में देने का निर्णय लिया गया है।

यह योजना परिवार की अधिकतम दो कन्या शिशुओं के लिए अनुमान्य है।

गौरी देवी कन्या धन योजना

गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे सभी जाति के परिवारों की इण्टरमीडिएट परीक्षा उत्तीर्ण करने वाली छात्राओं को कन्याधन का लाभ दिया गया है। इस हेतु वर्ष 2008–09 के दौरान 40 करोड़ रूपयों की व्यवस्था की गयी है।

इसके अन्तर्गत चयनित छात्रा को 25 हजार रूपये की धनराशि राष्ट्रीय बचत पत्र या एफ.डी. के रूप में दिये जाने की व्यवस्था है।

वर्ष 2007–08 में इस योजना से 5476 कन्याओं को लाभ प्राप्त हुआ था। इस वर्ष 11200 कन्याओं को लाभान्वित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

आंगनबाड़ी कार्यक्रम

7929 नये आंगनबाड़ी केन्द्र तथा 2444 मिनी आंगनबाड़ी केन्द्रों की स्थापना से 18.3 हजार महिलाओं के लिए रोजगार के साथ ही 1150 आंगनबाड़ी भवनों का निर्माण हुआ है।

मोनाल परियोजना

11 से 18 वर्ष की किशोरियों में जीवन कौशल निर्माण के उद्देश्य से मोनाल परियोजना शुरू की गयी है।

इस योजना को उत्तराखण्ड प्रशासन अकादमी नैनीताल से समन्वय कर प्रथम चरण में 980 किशोरियों को मास्टर ट्रेनर के रूप में तैयार करने का लक्ष्य रखा गया है। ये मास्ट ट्रेनर राज्य के 49 विकास खण्डो में किशोरियों के समूहों को प्रशिक्षित करेंगीं।

वर्तमान समय में नारी सशक्तीकरण हेतु चलाए जा रहे कार्यक्रमों व योजनाओं के कारण ही महिलाओं की सामाजिक स्थिति और भूमिका के बारे में चले आ रहे परम्परागत दृष्टिकोण में बदलाव आ रहा है। स्पष्ट है कि इस बदलाव का मुख्य कारण महिलाओं का शिक्षित होना ही है।

उत्तराखण्ड की महिलाएं एवं साक्षरता

– शिव कुमार शर्मा

हमारे देश में पौराणिक काल से ही महिलाओं को पूर्ण आदर एवं सम्मान दिया जाता रहा है। इस सम्बन्ध में कहा गया है :

"यत्र नारीयस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यतैतास्तु न पूजयन्ते सर्वास्त्रा पफलाः क्रिया।।" मनु0 3–56

स्पष्ट है वैदिक काल में महिलाओं को सम्मान का स्थान प्राप्त था। यदि मातृशक्ति नहीं होती तो राम, कृष्ण, महावीर, गुरूनानक जैसे धर्म संस्थापक और महाराणा प्रताप, शिवाजी, दयानन्द जैसे धर्मरक्षक तथा भगत सिंह, राजगुरू, आजाद जैसे स्वतन्त्रता रक्षक न होते। परिवार में माता, देश के रूप में भारत माता, विश्व शक्ति के रूप में जगत जननी जगदम्बा की आस्था हमारी नस–नस में विद्यमान है। लेकिन बाद की राजनैतिक परिस्थितियों, परिवर्तनों के कारण समाज में नारी के सम्मान में ह्रास होने लगा जिसके फलस्वरूप महिला सशक्तीकरण एवं विकास के लिए चिन्ता होने लगी। पुरूष प्रधान सामाजिक व्यवस्था होने के कारण महिलाओं की स्वतन्त्रता, शिक्षा एवं विकास में रूकावटें उत्पन्न होने लगी। नारी की दुर्दशा से निराश प्रसिद्ध कवि श्री भजनसिंह अपनी कविता 'अबलाओं की आह' में देशवासियों से कहते हैं –

यों छोड़कर पीछे उन्हें तुम, बढ़ नहीं सकते कभी।
उनके बिना उन्नति शिखर पर, चढ़ नहीं सकते कभी।।
कैसे बढ़ोगे विश्व में तुम छोड़ आधे अंग को?
कैसे सुखी होगे बताओ, तोड़ आधे अंग को?

सच है विकास की दौड़ में आगे बढ़ने के लिए महिलाओं को सशक्त बनाना ही होगा। इसीलिए भारत में संवैधानिक एवं सैद्धान्तिक रूप से महिलाओं को समान अधिकार प्राप्त है। सरकारी एवं गैर सरकारी सभी स्तरों पर महिला कल्याण एवं विकास के प्रयास निरन्तर किये जाते रहे हैं। महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक उन्नयन हेतु महिला हित संबंधि कानून लागू किये गये हैं। कन्या भ्रूण हत्या, दहेज, बाल विवाह आदि पर रोक हेतु सख्त कानून बनाये गये हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग

तथा राज्य महिला आयोग के गठन से महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों, तथा अनेक प्रकार के शोषण की घटनाओं में कमी आयी है, और महिलाओं में आत्म निर्भरता, जागरूकता, स्वावलम्बन बढ़ी है तथा समाज विरोधी तत्वों से लड़ने की सामर्थ्य प्राप्त हुई है।

महिला सशक्तीकरण के विभिन्न आयामों को साक्षरता बहुत अधिक प्रभावित करती है, क्योंकि साक्षरता के अभाव में महिलाएं वह सब कुछ प्राप्त नहीं कर सकतीं जिसकी वे हकदार हैं।

दीनानाथ मिश्र के अनुसार :

"जो साक्षर नहीं है, वह अधूरी जिन्दगी जीता है।
तथा हर प्रकार के शोषण का शिकार होता है।।"

उत्तरांचल राज्य का गठन 9 नवंबर 2000 को हुआ, बाद में 01 जनवरी 2007 से इसका नाम उत्तराखण्ड कर दिया गया। यह देश का 27वां, क्षेत्रफल की दृष्टि से 18 वां, जनसंख्या की दृष्टि से 20वां, जनसंख्या घनत्व की दृष्टि से 11वां तथा साक्षरता की दृष्टि से 14 वां राज्य है। उत्तराखण्ड विशेष राज्य का दर्जा प्राप्त 11वां हिमालयी राज्य है। इस राज्य की अपनी एक विशिष्ट भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, ऐतिहासिक पहचान है। उत्तराखण्ड की भौगोलिक स्थिति जटिल होने के कारण यहाँ की महिलाएँ लगातार संघर्षशील रहती हैं। उत्तराखण्ड की महिलाओं की गिनती बहुत ही कर्मठ, मेहनती, ईमानदार, साहसी, जागरूक एवं जुझारू महिलाओं में की जाती है। जीवन की अनेक कठिनाइयों एवं विषमताओं में भी सहज एवं सरल रहने की प्रवृत्ति उत्तरांचल की महिलाओं की पहचान बन गयी है।

उत्तराखण्ड के ग्रामीण अंचल में देखा जाय तो ज्ञात होता है कि यहाँ की महिलाएँ केवल गृहिणी नहीं हैं, किसान एवं उद्यमी भी हैं। यहाँ के अधिकांश पुरूष सेना तथा अन्य नौकरियों में बाहर काम करते हैं। इसलिये आर्थिक क्रियाकलापों में महिलाओं का योगदान पुरूषों की अपेक्षा अधिक है। सच्चाई यह है कि यहाँ की महिलायें ''मल्टी टास्क मैनेजर'' की भूमिका में दिखाई देती हैं। साक्षरता की दृष्टि से भले ही उत्तराखण्ड की महिलायें कुछ पीछे हों परन्तु देवभूमि उत्तराखण्ड की महिलायें वैचारिक रूप से बहुत ही समृद्ध हैं।

पृथक उत्तराखण्ड राज्य निर्माण के आन्दोलन में यहाँ की महिलाओं ने बढ़–चढ़कर भाग लिया था। उत्तराखण्ड के निर्माण में मातृशक्ति के योगदान को भला कौन नकार सकता है। इसमें हंसा धनाई तथा बेलमती चौहान का नाम विशेष उल्लेखनीय है। ''अभी दो, आज दो,

उत्तराखण्ड राज्य दो'' तथा ''फूल नहीं चिंगारी है, उत्तराखण्ड की नारी हैं'' जैसे नारों से उत्तराखंड की महिलाएं इस आन्दोलन को खेत और जंगलों से संसद तक ले गयीं और पृथक राज्य प्राप्त करके ही रहीं।

''शराब'' उत्तराखण्ड की महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति में बहुत बड़ी बाधक रही है और आज भी यह एक समस्या बनी हुई है जिसके कारण महिलाओं को शराबी पुरूषों द्वारा अपमानित एवं प्रताड़ित होना पड़ता है। शराब बन्दी आन्दोलन में दीपा नौटियाल उर्फ इच्छागिरिमाई जिन्हें ''टिंचरी माई'' के नाम से भी जानते हैं का संघर्ष एक मिसाल है।

उत्तराखण्ड में अधिकांश वन हैं। ग्रामीण महिलाओं के लिये ईंधन तथा पशुओं का चारा इन्हीं वनों से मिलता है। उत्तराखण्ड की किशोरियों द्वारा चलाई जाने वाली 'मैती' प्रथा वनों के संरक्षण एवं संवर्द्धन में सहायक सिद्ध होगी। वन सम्पदा बचाओ सम्बन्धी विश्वविख्यात ''चिपको आन्दोलन'' में उत्तराखण्ड की महिलाओं विशेषकर गौरादेवी की निर्णायक भूमिका रही है।

इस प्रकार के आन्दोलनों ने यह सिद्ध कर दिया है कि उत्तराखण्ड की ''रीढ़'' महिलाएँ बहुत ही जुझारू एवं जागरूक है। उत्तराखण्ड की महिलाओं के कार्य इस बात को सार्थक सिद्ध करते हैं कि ''पहाड़ से भी ऊँचे हैं, पहाड़ी महिलाओं के हौसले''।

वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार उत्तराखण्ड राज्य में इकतालीस लाख तिरेसठ हजार चार सौ पच्चीस (41,63,425) महिलायें हैं। महिलाओं की संख्या राज्य की कुल जनसंख्या का 49 प्रतिशत है। महिला साक्षरता की दृष्टि से उत्तराखण्ड का देश में 18वाँ स्थान है। उत्तराखण्ड में कार्यशील व्यक्तियों में महिलाओं की हिस्सेदारी 36 प्रतिशत है, जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में यह 42 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 12 प्रतिशत है। पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाओं का परिवार चलाने में बहुत अधिक योगदान है।

उत्तरकाशी, राज्य का ऐसा जिला है जहाँ महिला साक्षरता केवल 47.48 प्रतिशत है जो कि राज्य के सभी जिलों में न्यूनतम है जबकि देहरादून में महिला साक्षरता 71.22 प्रतिशत है, यह सभी जिलों में अधिकतम है। राज्य में 60.26 प्रतिशत महिलायें साक्षर हैं। राज्य में महिलाओं की साक्षरता का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में 23.75 प्रतिशत कम है यद्यपि 1991–2001 के दशक में महिला साक्षरता में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। महिला साक्षरता का प्रतिशत कम होने का एक कारण यह है कि राज्य में बालिका विद्यालयों की संख्या कम है। ग्रामीण क्षेत्रों में अभिभावक लड़कियों को पढ़ने के लिये दूर विद्यालयों में नहीं भेजते इसलिये ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका विद्यालयों की आवश्यकता है। उत्तराखण्ड में साक्षरता का परिदृश्य सारणी में प्रदर्शित है। सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि राज्य के सभी जनपदों में महिला साक्षरता, पुरुषों से कम है।

उत्तराखण्ड में साक्षरता प्रतिशत (2001)

जनपद	साक्षरता प्रतिशत में			
	व्यक्ति	**पुरुष**	**महिला**	**लिंग अन्तर**
उत्तरकाशी	66.58	84.52	47.48	37.04
चमोली	76.23	89.89	63.00	26.89
रूद्रप्रयाग	74.23	90.73	59.98	30.75
टिहरी गढ़वाल	67.04	85.62	49.76	35.86
देहरादून	78.96	85.87	71.22	14.65
पौड़ी गढ़वाल	77.99	91.47	66.14	25.33
हरिद्वार	64.60	75.06	52.60	22.46
गढ़वाल मण्डल	**72.11**	**83.75**	**60.03**	**23.72**
अल्मोड़ा	74.53	90.15	61.43	28.72
बागेश्वर	71.94	88.56	57.45	31.11
नैनीताल	79.60	87.39	70.98	16.41
उधमसिंह नगर	65.76	76.20	54.16	22.04
पिथौरागढ़	76.48	90.57	63.14	27.43
चम्पावत	71.11	88.13	54.75	33.38
कुमायूँ मण्डल	**72.51**	**84.36**	**60.57**	**23.79**
उत्तराखण्ड	**72.28**	**84.01**	**60.26**	**23.75**

स्रोतः नियोजन निदेशालय, देहरादून, उत्तरांचल (2001)

उत्तराखण्ड के जनपद अल्मोड़ा में प्रति 1000 पुरूषों पर 1147 महिलायें हैं, यह सभी जिलों से अधिक हैं। जबकि हरिद्वार जनपद में प्रति 1000 पुरूषों पर केवल 868 महिलाएं हैं जो कि राज्य के सभी जिलों में न्यूनतम हैं। यह तथ्य बड़ा ही सन्तोषप्रद है कि जहाँ देश के अनेक राज्यों में महिला लिंगानुपात घट रहा है, वहीं उत्तराखण्ड में महिला लिंगानुपात 1991 से 2001 के बीच 936 से बढ़कर 964 हो गया है। इस प्रकार महिला लिंगानुपात में प्रति 1000 पुरूषों पर 28 की वृद्धि हुई है। इस अवधि में महिला साक्षरता 41.63 प्रतिशत से बढ़कर 60.26 प्रतिशत हो गयी। इस प्रकार महिला साक्षरता में दशकीय वृद्धि 18.63 प्रतिशित हुई। महिला साक्षरता तथा महिला लिंगानुपात दोनों में वृद्धि इनके धनात्मक सहसम्बन्ध को दर्शाती है।

पहले राजनीति के क्षेत्र में पुरूषों का ही वर्चस्व था परन्तु महिलाओं में साक्षरता एवं शिक्षा का

स्तर सुधरने से इस क्षेत्र में भी महिलाओं की संख्या बढ़ी है। आज देश की राष्ट्रपति, प्रदेश की राज्यपाल, केन्द्र सरकार में सत्तारूढ़ दल की मुखिया, नेता प्रतिपक्ष सभी महिलायें हैं। संविधान के 73वें तथा 74वें संशोधन द्वारा महिलाओं को राजनीति के क्षेत्र में भी सशक्त बनाने हेतु प्रयास किये गये हैं। ग्राम पंचायतों, नगर पंचायतों, जिला पंचायतों आदि में महिलाओं के लिये सीटों की संख्या 50 प्रतिशत आरक्षित की गयी है। जिसके कारण उत्तराखण्ड में 3739 महिलाएँ ग्राम प्रधान हैं। 13 जिलों में से 6 जिलों में जिला पंचायत अध्यक्ष महिलाएँ हैं। 28 नगर पंचायत अध्यक्षों में से 19 महिलाऐं हैं। राज्य की एक मात्र नगर निगम देहरादून की मेयर भी महिला ही हैं। उत्तराखण्ड में कुल 7335 पंचायतों में 61021 प्रतिनिधि हैं जिनमें से 33610 महिला प्रतिनिधि हैं। परन्तु इसके साथ ही उत्तराखण्ड की विधान सभा के 70 विधायकों में से केवल 04 ही महिला विधायक हैं जो कि कुल विधायकों का मात्र 5.63 प्रतिशत हैं और लोकसभा में उत्तराखण्ड का प्रतिनिधित्व करने वाली कोई महिला सांसद नहीं है। इस दिशा में राज्यसभा में पारित महिला आरक्षण बिल, महिला सशक्तीकरण की नई दिशा तय करेगा।

उत्तराखण्ड की महिलायें सभी क्षेत्रों में अग्रणी हैं। उत्तराखण्ड में बालिकाओं की शिक्षा की प्रेरणा स्रोत गंगोत्री गर्व्याल किसी परिचय की मोहताज नहीं हैं। उनकी विशिष्ट सेवाओं के लिये उन्हें "राष्ट्रपति पुरस्कार" से सम्मानित किया गया। साहित्य के क्षेत्र में महान लेखिका गौरा पंत उर्फ "शिवानी" का बहुत बड़ा योगदान है। उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिये उन्हें "पदम श्री" से सम्मानित किया गया। मृणाल पाण्डे इन्हीं की पुत्री हैं। "हिमालय पुत्री" के नाम से विख्यात सुश्री बछेन्द्री पाल एवरेस्ट शिखर पर आरोहण करने वाली प्रथम भारतीय महिला इसी राज्य की हैं। इन्हें "पदम श्री", "अर्जुन एवार्ड" जैसे अनेक पुरस्कारों से नवाज़ा गया। गढ़वाल विश्वविद्यालय ने इन्हें डी0लिट0 की मानद उपाधि से अलंकृत किया है। उत्तराखण्ड में ऐसी जुझारू एवं कर्मठ महिलाओं की एक लम्बी कतार है।

पर्वतीय ग्रामीण महिलाओं के समग्र विकास के लिये उनके घर–आंगन के समीप ही रोजगार उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में पृथक बालिका विद्यालय खोले जाने की महती आवश्कता है। प्रौढ़, निरक्षर महिलाओं को साक्षरता अभियान तथा सतत शिक्षा के माध्यम से साक्षर बनाने की आवश्यकता है जिससे उनका सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक तथा राजनैतिक उन्नयन हो सके। इसके लिए स्थानीय समाजसेवी संस्थाओं, शिक्षित महिलाओं, साक्षरता कर्मियों, पंचायत प्रतिनिधियों आदि सभी की सामूहिक सहभागिता आवश्यक है जिससे उत्तराखण्ड पूर्ण साक्षर प्रदेश बन सके।

❍❍❍❍❍

साक्षरता का रंग

वह अब दौड़ जाती है
झीतरा के आंगन में
हाथ में पट्टी,
माथे पर बिन्दी
और चेहरे पर
अजीब आत्मविश्वास लिए
वह चलती है
बेधड़क, स्वाभिमान से
वह अब
उड़ने लगी है, पहुंच जाती है,
मंगलिया के आंगन,
तो कभी रमली के घर
करती है
देश, समाज, घर,
सबकी ढेर सारी बातें
मैं देख रहा हूं
जिस झेला से कभी कोई
बात नहीं करता था
आज सबके सब बैठे हैं
उसके करीब, सुन रहे हैं
ध्यान से, जिज्ञासा से उसकी सारी बातें।

–रामशंकर चंचल

छोटे छोटे कदम और टुकड़ा टुकड़ा बातें

– विमला लाल

छोटे छोटे कदम और टुकड़ों में कही गई बातें कई बार अनायास ही बड़ी बड़ी समस्याओं का समाधान ऐसे कर जाती हैं, जिसका कभी किसी को अन्दाज भी नहीं होता। इस बात का अहसास एक महिला गोष्ठी में हुआ जहां विभिन्न महिला समितियों की प्रतिनिधि महिलाएं अपने अपने सुझावों और दृष्टिकोण को लेकर ऐसी जोरदार बहस कर रही थीं जैसे एक दूसरे पर दनादन गोलियां दाग रही हों। देख कर लग रहा था जैसे पूरी की पूरी समस्या का अर्पण–तर्पण आज ही होने वाला हो।

तभी वहां एक मूक श्रोता बनी बैठी महिला ने धीरे से कह दिया – "आज मैं घर जाकर अपने बच्चों को सिखाऊंगी कि महिलाओं का सम्मान क्यों और कैसे करना चाहिए।"

बात बहुत ही सरल और सहज ठंग से कही गई थी। लेकिन सुन कर लगा जैसे इसी एक वाक्य ने पूरी की पूरी समस्या के आगे पूर्ण विराम लगा दिया हो। मूल पर सच का प्रहार था जैसे।

यह एक कड़वा सच है कि समस्या चाहे कोई भी हो, महिलाओं की, वृद्धों की, बच्चों की अथवा शिक्षा की, उसका उद्‌गम स्थल प्रायः घर परिवार का आंगन ही होता है। परिवारों में महिलाओं का अनादर हुआ तो सामाजिक स्तर पर उनका अपमान होने लगा। घरों में शिक्षा के प्रति अवहेलना हुई तो निरक्षरता के बीज पूरे समाज में बिखर गए। जिन परिवारों में शैक्षिक चैतन्यता और सर्तकता बनी रही वहां लड़कियों समेत बच्चे पढ़ते भी रहे ओर आगे भी बढ़ते रहे। कहीं कोई रूकावट नहीं आई। उच्च पदों पर आसीन महिलाओं का इतिहास इसका साक्षी है। संख्या में चाहे वे अपवाद स्वरूप ही रही हो लेकिन कभी उन्होंने किसी से आरक्षण की भीख नहीं मांगी। जो किया अपने ही बल बूते पर किया। न कोई महिला मिशन बना और न ही वे परिस्थितियों से हारीं। यहां तक कि जागरूक अनपढ़ महिलाओं ने भी अपने बच्चों को न केवल प्रेरित किया बल्कि कई मांओं ने तो मेहनत मजदूरी करके भी बच्चों को शिक्षित किया।

किन्तु जो परिवार परिस्थितियों से हार कर शिक्षा के महत्व को ही भूल गए उन्हें समाज ने भी हीनता के ऐसे कटघरे में खड़ा कर दिया जहां वे स्वयं का मान सम्मान भूल कर केवल जीने की मजबूरी में ही सिमट कर रह गए। वे लोग आज तलक उस स्थिति से उबर नहीं पाए और निरक्षरता का लेबल लगाए गुलामी की प्रवृति को इस कदर पोषित करते रहे कि आजादी से सांस लेना भी उन्हें अनाधिकारिक चेष्टा लगने लगी और धीरे धीरे यह प्रवृति विरासत की तरह पीढ़ियों में व्याप्त हो गई।

स्थिति आज भी वहीं है। योजनाओं, आकर्षणों, सुविधाओं और विज्ञापनों की भरमार है, फिर भी अनपढ़ता मुंह चिढ़ा रही है। आंकड़े हैं कि कम होने का नाम ही नहीं ले रहे। ड्राप आउटस की संख्या दिनों दिन बढ़ रही है जिसे देख कर नित नए मिशन गठित हो रहे हैं, नए लक्ष्य निर्धारित

होते हैं और नई पद्धतियों का आविष्कार होता है आखिर क्यों? क्योंकि पारिवारिक सोच, पारिवारिक संघर्ष और पारिवारिक परिस्थितियां आज भी लौह स्तम्भ सी अवरोधक तत्व बनी सामने खड़ी हैं। परिवारों का शिक्षा के प्रति अवहेलित दृष्टिकोण आज भी सर्प दंश दे रहा है। जबकि सामाजिक जागरूकता की कहीं भी कमी नहीं है। ढ़ोल पीट–पीट कर लोगों को जगाया जा रहा है। किन्तु कहते हैं न कि "सोए को तो जगाया जा सकता है, पर जागते को कोई कैसे जगाए"।

देख सुन कर भी एक बड़ी संख्या में परिवार शिक्षा की अनिवार्यता को स्वीकारने को तैयार नहीं हैं। विशेष कर निम्न मध्यम वर्ग के परिवार। इन परिवारों के लड़के आज भी ढ़ाबों पर जूठन धोते दिखाई दे जाते हैं और लड़कियां मां का आंचल पकड़े या तो घर–घर जाकर बर्तन मांजती हैं या फिर घर पर बैठ मां की पैदाईश को ही पाल रही होती हैं, जिसके चलते बाल मजदूरी के आंकड़े भी कम होने का नाम नहीं लेते। ऐसे परिवारों में न मां बाप के कानों में जूं रेंगती है, न बच्चों के कानों पर। मां–बाप के लिए अशिक्षित बच्चा होश सम्भालते ही कमाई का साधन बन जाता है और बच्चे निरंकुश जीवन जीने के ऐसे आदी हो जाते हैं कि शिक्षा उन्हें बोझ और बंधन लगने लगती है। ऐसे वातावरण में पला बढ़ा बच्चा पढ़ना तो दूर ढ़ीठ, गुस्ताख और शालीनता रहित जीवन जीने की आदत ऐसी शिदद्त से अपना लेता है कि सामाजिक तथा मानवीय मूल्य और आचरण दोनों दांव पर लग जाते हैं। यही कारण है कि महिला शिक्षा की अनिवार्यता को इतनी शिदद्त से महसूस किया जा रहा है। महिला परिवार की मूल भी है और बच्चों की पहली गुरू भी। शिक्षित मां का मानसिक बल और विकास बच्चे का बहुत बड़ा सम्बल होता है। तभी तो कहा जाता है कि अगर पुरूष पढ़ता है तो केवल एक व्यक्ति पढ़ता है और अगर महिला पढ़ती है तो पूरा परिवार पढ़ता है। व्यक्ति का उठा हर सार्थक कदम परिवार की मानसिकता का प्रमाण भी होता है और आसान भी होता है।

माना कि महिलाओं की शैक्षिक अवस्था आज वह नहीं रही जो आज से कुछ दशक पहले तक थी। आज की महिला निरक्षरता को अपराध मानती है। वह भी पढ़े लिखे की कतार में खड़ी होना चाहती है किन्तु वक्त की मजबूरियां, परिस्थितियां, जिम्मेदारियां और कभी कभी भीतर की हीनभावना उन्हें चाह कर भी कदम बढ़ाने नहीं देती। वह स्वयं को मजबूर महसूस करती है पर भय और हीनता के कारण किसी से अपने अनुभव बांट नहीं सकती, चाहत जाहिर नहीं कर सकती। परिवार पर उसे विश्वास नहीं, इसलिए घुटती है। उसके भीतर की इस घुटन को अगर परिवार के शिक्षित लोग महसूस कर लेते तो काम आसान हो जाता। किन्तु परिवारों ने इसे जरूरी नहीं समझा। उनके पूर्वाग्रहों के अनुसार महिलाओं की शिक्षा कोई महत्व ही नहीं रखती और स्वयं महिला तो अपने विषय में सोचना जानती ही नहीं। "अपने लिए सोचना मतलब स्वार्थी हो जाना" इस तरह के स्वार्थ के अर्थ, परिवार की केवल इच्छा भर जताने से बदल सकते थे, औरत के भीतर विश्वास पैदा कर सकते थे। उसके भीतर की हीनभावना को समाप्त कर सकते थे। लेकिन ऐसा हुआ नहीं, क्योंकि परिवारों

ने इसे जरूरी नहीं समझा जबकि वे जानते हैं कि उनका यह छोटा सा प्रयत्न उन्हें ही लाभान्वित करने वाला है।

आज कल प्रायः स्कूलों में समाजसेवी विषय अनिवार्य किए गए हैं जिनके तहत बच्चे कभी वृद्धाश्रमों में तो कभी महिलाश्रमों में या फिर बालगृहों में सेवा करने जाते हैं। किन्तु अगर निरक्षरता उन्मूलन को भी इसी के साथ जोड़ कर व्यक्ति स्वयं अपने घर से ही प्रारम्भ करे ऐसी परिपाटी चलाई जाती तो एक पंथ और दो काज हो जाते। समस्या को एक राह मिल जाती। बिना हींग फटकरी के भी चोखे रंग की सम्भावना बन जाती।

यह पद्धति कुछ समय पहले शायद लागू भी की गई थी। उसमें घर की बात तो नहीं थी, पर कुछ निरक्षरों को साक्षर करके प्रमाण पत्र पाने की बात अवश्य थी। किन्तु जैसा कि रिवाज़ है, झूठे प्रमाण पत्रों ने सच्ची पर ही रोक लगा दी और समस्या वहीं की वहीं अपने कर्णधारों का मुंह निहारती रह गई। खैर अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा। जब जागो तभी सवेरा। आज भी अगर हर छात्र कम से कम पांच निरक्षरों को साक्षर करने की जिम्मेदारी उठा लें तो निरक्षरता के रूके आंकड़े अधिक दिन तक टिक नहीं सकते। कार्य घर की महिलाओं से ही प्रारम्भ हो सकता है। महिलाएं इस प्रयत्न को अपना गौरव मान स्वीकारेंगी भी और आगे भी बढेंगी। वैसे भी महिलाएं पुरूषों से अधिक जागरूक और संवेदनशील होती हैं। उनके सीखने की प्रक्रिया भी सहज और सरल होती है। उनकी लगन और जिम्मेदारी की भावना 'सालों की पिछड़ी राहे महीनों में भाग कर तय करने' में सहायक हो सकती है। क्षमता की उसमें कभी कोई कमी नहीं रही। जरूरत है तो बस इंगित मात्र से उनकी प्रतिभा को जगाने की और उसकी जरूरत महसूस करवाने की जो परिवार के सदस्यों के लिए बहुत ही आसान है। आजकल तो यह कार्य वैसे भी बहुत आसान हो गया है। बदलते वक्त की चेतना, इच्छा शक्ति और जरूरत इन्सान की चाहत को भी नई राह दे रही है। उदाहरण हमारे सामने है। एक निरक्षर महिला की भाषा में भी नित नये और सार्थक शब्दों का समावेश देखने को मिलता है। अंग्रेजी के शब्द भी जिन सटीक अर्थों में वह सहज ही प्रयोग करने लगी है उन्हें देख कर तो एक बार शिक्षित व्यक्ति भी धोखा खा जाता है। अपने पावने के प्रति वह अति सजग है। आगे वह महिला सीट को किस अधिकार से खाली करवाती है, देखने वाली बात होगी। यह और बात है कि उनकी शिक्षा का परिचय तभी पता चलता है जब वह कर्तव्य को बाजू करके बगल की सीट खाली होने पर किसी महिला के बैठने के बजाए अपने साथी पुरूष को अधिक वरीयता देती है। आत्म सम्मान के प्रति ऐसी सजगता कि घर की बाई को अगर किसी ने 'काम वाली' कह दिया तो झट से उत्तर मिलता है 'मेम साहब काम वाली तो आप भी हैं अन्तर केवल इतना है कि आप दतर में काम करती है और हम घरों में।'

ऐसी सजगता और तत्परता को शिक्षा की ओर मोड़ना परिवार के लिए कुछ अधिक कठिन काम नहीं है। हर शब्द को सार्थक अर्थ का मोड़ दिया जा सकता है।

किन्तु यह चैतन्यता और सर्तकता नगरों की अपेक्षा गांवों में बहुत कम है। गांव की महिला शिक्षा से पहले गरीबी और गांवों की परम्पराओं से जूझती है। पुरूषों के दबदबे का सामना करती है। सिर उठा कर बात करने की उनकी हिम्मत ही नहीं होती। यही कारण है कि ढ़ेरों उपाय करने के बाद भी गांवों में निरक्षरता अंगद सा पैर जमाए खड़ी है।

माना कि गांवों के लिए भी योजनाओं की कमी नहीं है। किन्तु शहरी परिवेश में निर्मित योजनाऐं गांवों की धुल धुसरित राहों को पार करते हुए किस रूप में वहां पहुंचती हैं और कैसे क्रियान्वित होती हैं, यह बात किसी से भी छिपी नहीं है। कभी धन नहीं होता तो कभी मन नहीं होता। कभी पढ़ाने वाले नहीं होते तो कभी पढ़ने वाले ही गायब होते हैं। शहरों के कार्यकर्त्ता जाते नहीं और गांव के कार्यकर्त्ताओं को कोई पहचानता नहीं जबकि गांव की मिटटी में ही पला बढ़ा कार्यकर्त्ता इस कार्य को बड़ी सरलता से कर सकता है। छोटे छोटे समूहों में बांट कर गांव के तीन चार कार्यकर्त्ता सालों का काम महीनों में ही कर सकते हैं। परस्पर की प्रतिस्पर्धा कार्य को और तीव्र गति प्रदान कर सकती है। चौपालों पर, खुले मैदान में, आयोजित छोटी छोटी बैठकें, और गोष्ठियां बदलते वक्त की हर जानकारी बड़ी आसानी से दे सकती हैं और व्यक्ति के सर्वांगींण विकास को एक दिशा मिल सकती है। स्वयंसेवी संस्थाएं इसमें भाग लेकर कार्य को रोचक भी बना सकती हैं और कार्य सिद्धि को आसान भी कर सकती हैं। रोजमर्रा की समस्याओं, अधिकारों और कर्तव्यों का समन्वयात्मक बोध व्यक्ति के जीवन में नवीनता ला सकते हैं। भीतर की हीनता को त्याग वह बदलते वक्त के साथ कदम दर कदम चल सकते हैं। सच पूछें तो यही वह बेसिक शिक्षा है जिसकी ग्रामीण परिवेश में अत्याधिक आवश्यकता है। जरूरत है तो आसान साधन तलाशने की, लगन की और ईमानदारी की।

ये बातें बहुत ही छोटी और सरल हैं। बड़ी बड़ी योजनाओं के दायरे में कहीं आती भी नहीं किन्तु इस सत्य को नहीं नकार सकते कि आगे चलने और बढ़ने के लिए सर्वप्रथम पैर धरती पर ही जमाने पड़ते हैं। धरती और मानव की मौलिकता और जरूरतों को जोड़ कर समस्या के कारणों को खोजना पड़ता है और फिर उन्हीं कारणों को हथियार बना कर जंग जीता जा सकता है और यह शुरूआत सीधी उस घर से, घर के द्वारा भी हो सकती है जहां निरक्षरता विराजती है। जरूरत है तो बस छोटे छोटे कदम उठाने की। राहें अपने आप आसान हो जाऐंगी।

हत्यारिन नहीं हूं मैं

– सरोज

नगर के एक जाने–माने परिवार में दूर–दूर तक केवल बेटे ही थे। एक भी बेटी नहीं थी। वर्षों से दरवाज़े पर से किसी की डोली नहीं उठी थी। लोगों को बड़ा आश्चर्य था कि पता नहीं इस परिवार को कोई वरदान प्राप्त है अथवा किसी महाशक्ति का चमत्कार है कि घर में एक भी कन्या नहीं है। मैं भी इसी परिवार के सुपरिचित लोगों में से एक हूं।

एक दिन संध्या के समय मैं उनके घर पहुंच गया। बीमा कम्पनी के कागजों पर हस्ताक्षर करवाना आवश्यक था। मुझे भी मालिक ने वहीं बैठने का संकेत किया जहां शम्भुसिंह जी के पुत्र के विवाह के विषय में दो परिवारों के बीच वार्ता चल रही थी। शंभु सिंह जी ने सामने बैठे हुए कन्या के माता–पिता से बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा –

"आपकी पुत्री हमें सब प्रकार से अच्छी लगी है। विवाह के लिए हमें दहेज नहीं चाहिए। हमारी बस एक ही शर्त है।"

"कैसी शर्त ..... क्या चाहते हैं आप?"

"हम केवल इतना ही चाहते हैं कि कन्या के गर्भ में यदि पुत्री सन्तान होगी तो उसे नष्ट कर देना होगा। हमारे वंशधर पुत्री के पक्ष में नहीं है।"

कन्या के माता–पिता एकदम सन्न रह गये और चुपचाप जमीन में आंखें गड़ाये बैठे रहे।

"भई! आप अच्छी तरह से सोच विचार कर लें। हमें इतनी भी जल्दी नहीं है। परिवार और भी बहुत हैं जहां से मेरे पुत्र के लिए प्रस्ताव आ रहे हैं।"

कुछ समय मौन रहने के बाद कन्या पक्ष ने शर्त मान ली। क्योंकि दहेज का कोई बन्धन नहीं था। लड़का सुशिक्षित था, अच्छा कमाता था और परिवार भी सम्पन्न और सभ्य था। इस विषय में पुत्री को उन्होंने कुछ नहीं बताया।

सरोज का विवाह बड़ी धूमधाम से विश्वजीत के साथ हो गया। विवाह के दो वर्ष बाद जब सरोज गर्भवती हुई तो उसके पति ने कहा – "चलो। जांच करवा लें, यदि कन्या हुई तो उससे मुक्ति पानी होगी।"

"क्या कहा आपने ..... मैं मां हूं, हत्यारिन नहीं हूं। आपकी मां, दादी, नानी भी तो कभी कन्या ही रही होंगी।"

"हमारे घर में यही परम्परा चली आ रही है। विवाह से पहले आपके माता–पिता को स्पष्ट बता दिया गया था" कहा विश्वजीत ने।

"मैं ऐसी किसी शर्त के विषय में कुछ नहीं जानती। यह परम्परा आप ही ने तो बनाई है। वह बदली भी जा सकती है, टूट भी सकती है। रहा खर्च का प्रश्न..... यदि बेटी होगी तो उसके भरण–पोषण, शिक्षा तथा विवाह का सम्पूर्ण खर्च मैं स्वयं वहन करूंगी। वह बोझ नहीं होगी आपके सिर पर।"

बहुत समय तक घर में एक अजीब सी बेचैनी, दबा–दबा सा रोष और अशान्ति बनी रही। किन्तु सरोज ने भ्रूण की जांच और हत्या को पूरी तरह नकार दिया। समय आने पर उसने एक कन्या को जन्म दिया। उसका नाम रखा दीप्ति। घर में खुशी छा गई। मानो सरोज का यह साहसपूर्ण कदम युगों के अन्धकार पर प्रकाश की विजय का उत्सव था।

(यह आपबीती सरोज की है जिसे लिपिबद्ध किया है लक्ष्मी रूपल ने)

The Right to Education now a Fundamental Right

-Ashok Handoo

If Gopal Krishan Gokhle, one of the greatest sons of India, would have been alive today, he would have been the happiest person to see his dream of 'right to education' for children of the country come true. It was he who, a hundred years ago, urged the Imperial Legislative Assembly confer such a right on Indian children. That goal has been realized a century later.

The Government has finally come over all the odds and given effect to the Right to Education Act (REA) from 1st April this year. The right to education is now a fundamental right for all children in the age group of 6 to 14 years. In simple words, it means that the Government will be responsible for providing education to every child up to the eighth standard, free of cost, irrespective of class and gender. It has thus paved the way for building a strong, literate and empowered youth of this country.

The Act envisages providing quality and compulsory education to all children and equip them with knowledge, skills and values to make them enlightened citizens of India. Considering that today there are about a crore of children across the country out of schools, this indeed is a huge task. The realization of this goal, therefore, calls for a united effort by all the stakeholders- the parents, the teachers, the schools, the NGO's, the society at large, the state governments and the central government. As the Prime Minister Dr. Manmohan Singh put it in his address to the Nation, all have to work in unison and meet the challenge as a national mission.

Dr. Singh put across his point to the countrymen in his own inimitable style by telling them that it was only because of education that he is what he is today. He referred to how he studied in the dim light of a kerosene lamp, walked long distances to reach his school in Wah, now in Pakistan and suffered considerable hardships to get elementary education. The message, urging the deprived class to get education, could not have been put across in a better way.

The Act provides for neighbourhood schools within reach, with no school refusing admission to any child. It also provides for adequate number of qualified teachers to maintain a ratio of one teacher for every 30 students. The schools have to train all its teachers within 5 years. They have also to ensure proper infrastructure, which includes a playground, library, adequate number of classrooms, toilets, barrier free access for physically challenged children and drinking water facilities within three years. 75 percent members of the school management committees will comprise parents of the students who will monitor the functioning of the schools and utilization of grants. The school management Committees or the local authorities will identify the out of school children and admit them to standards appropriate to their age, after giving them proper training. To promote inclusive growth even private schools have to reserve 25 percent of seats in the lowest class for the poor and marginalized sections of the society, beginning next year.

The goals are indeed laudable. But to realize them is a huge challenge. The sheer size of the out of school children - about ten million- is the biggest one. Shortage of trained teachers, lack of infrastructure in schools, requirement of additional schools, and finances are the other big challenges.

The current situation presents a dismal picture. 46 % schools do not have toilets for girls, which has been an important reason for parents not sending children to the schools. There are over 12.6 lakh vacancies of teachers across the country. 7.72 lakh untrained teachers constitute 40 % of the total number of teachers in 1.29 million recognized elementary schools. Over 53% schools have the student teacher ratio of well above 1:30, prescribed under the Act.

Shortage of trained teachers will be one of the major challenges in implementing the Act. A plan has thus been drawn to recruit as many as 5 lakh teachers in the next six months, to fill up the vacancies.

As far as the finances are concerned the Act provides for sharing it with the states, with centre contributing 55 percent of the total expenditure. It has been estimated that the implementation of the Act will require Rs. 1.71 lakh crore in the next five years. In the current year there will be a requirement of 34 lakh crore. Out of this, the central budget has provided for Rs.15,000 crore. There is also an unspent amount of about Rs. 10,000 crore with the states, provided earlier by the centre for educational programmes. The Finance Commission has allocated Rs. 25,000 crore to the states for implementing the Act. Despite this, states like Bihar, Uttar Pradesh and Orissa have asked for additional funds. The Prime Minister has made it clear that finances will not be allowed to come in the way of implementing the Act. What is needed is the sincerity of approach by all the stakeholders to make the project a success. There will be a Child Rights Commission to look into the violations of the Law.

Many other challenges also stare us in the face. Parents in the low income group, send their children to work, for adding to the family income. Issues like early marriages and migration of people for sustenance also need to be addressed to successfully implement the Act.

India has thus embarked upon a massive programme to lay foundations of a strong country with a statutory support. It has joined the small group of countries which have such a statutory provision. It is indeed a path breaking step towards universalisation of education. The Prime Minister made it clear that dalits, minorities and the girl students will be the focus of the effort to provide education to all. By saying that he wanted "every Indian to dream about a bright future and live this dream," Dr. Singh emphasized his government's commitment to make every Indian literate. It is for us now to see this goal through. That education is in the concurrent list underlines the need for better cooperation at all levels.

(Courtesy PIB)

❍❍❍❍❍

हमारे लेखक

वी. मोहनकुमार
निदेशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
नई दिल्ली –110002

प्रमिला जोशी
प्रधानाचार्या
मरियम इन्सटीट्यूट ऑफ हायर एजूकेशन,
हल्द्वानी

संगीता पवार
अंशकालिक प्रवक्ता
शिक्षा विभाग
एस.एस.जे. कैम्पस, अल्मोड़ा
कुमाऊं विश्वविद्यालय
नैनीताल – 263601 (उत्तराखण्ड)

रामशंकर चंचल
मं. 145, गोपाल कॉलोनी
झाबुआ – 457661
(मध्य प्रदेश)

शिवकुमार शर्मा
ए–62, शारदा नगर
ज्वालापुर, हरिद्वार
(उत्तराखंड)

लक्ष्मी रूपल
क्वॉटर नं. 16 टाईप–2
के.वी. नं.2, स्टाफ कैम्पस
चामंडीमंदिर केन्ट,
डिस्ट्रीक्ट पंचकुला
(हरियाणा)

हंसराज पाल
प्रोफेसर, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर

जितेन्द्र कुमार पाटीदार
प्राचार्य, विद्यासागर शिक्षा महाविद्यालय, भिचौली मर्दाना, इन्दौर

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

कार्यकारिणी समिति

संरक्षक

प्रो. भवानीशंकर गर्ग

अध्यक्ष

श्री कैलाश चौधरी

उपाध्यक्ष

श्रीमती राजश्री बिस्वास
प्रो. ए.एच. खान
प्रो. अरूण मिश्रा
डा. एल. राजा
प्रो. एस.वाई. शाह

महासचिव

डॉ. मदन सिंह

कोषाध्यक्ष

डा. मनोहर सिंह राणावत

संयुक्त सचिव

श्री ए.एल. भार्गव

सह–सचिव

श्री सुधीर चटर्जी
श्री प्रफुल्ल नागर
डॉ. पी.ए. रेड्डी
डॉ. निर्मला नुवाल

सदस्य

श्रीमती इन्द्रा पुरोहित
सुश्री कुन्दा सुपेकर
श्रीमती सुरेखा खोत
प्रो. सुशीले गौडा
डॉ. मफतलाल पटेल
प्रो. वी. रेघु
डॉ. एस.एल. शर्मा
डॉ. ओ.पी.एम. त्रिपाठी

सहयोजित सदस्य

श्री एच.सी. पारीख
प्रो. सुरेन्द्र सिंह
सुश्री निशात फारूख़
श्री हरीश कुमार एस.
श्री सुरेश चन्द्र खण्डेलवाल

पोस्टल रजिस्ट्रेशन नं0 डी.एल.(सी)-01/1158/10-12
प्रौढ़ शिक्षा अप्रैल 2010, आर.एन.आई. 4551/57

"With the enactment of the Right of Children to Free and Compulsory Education Act 2009, every child between the ages of 6 to 14 years now has the right to free education. The Act while acknowledging the participation of private education providers seeks to ensure that equity and quality go hand in hand with improved access."

– Shri Kapil Sibal, Minister, HRD, GOI

स्वत्वधिकारी भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ के लिए महासचिव डा. मदन सिंह द्वारा 17–बी आई.पी. एस्टेट, नई दिल्ली–2 से प्रकाशित, सम्पादित और उनके द्वारा मैसर्स– ग्राफिक वर्ल्ड, 1686, कूचा दखिनी राय, दरियागंज, नई दिल्ली–2 से मुद्रित।

वर्ष 53 अंक 9

एक प्रति 10 रूपये
अप्रैल 2010

प्रौढ़ शिक्षा

प्रौढ़, सतत एवं आजीवन शिक्षा जगत का मुख पत्र

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ